CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

7.2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कंथा-मणि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कंथा-मणि

कुबेरनाथ राय

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

KANTHA MANI

Poems
by
Kubernath Rai

1998

ISBN : 81-7124-191-3

प्रथम संस्करण : १९९८ ई.

प्रकाशक
विश्वविद्यालय प्रकाशन
चौक, वाराणसी-२२१००१

मुद्रक
वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०
चौक, वाराणसी-२२१००१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्मरण

स्वर्गीय श्री कुबेरनाथ राय बहुत शुद्ध व्यक्ति थे और उनका संस्कृति का ज्ञान तलस्पर्शी था। उनके निबन्धों में उनके ज्ञान की प्रतिछवि भरपूर रहती है और बड़ा विस्मय होता है कि अंग्रेजी के अध्यापक को भारतीय संस्कृति के विभिन्न आयामों का और प्राचीन भारतीय साहित्य का इतना गहरा मर्म कैसे केवल निजी साधना के बल पर मिला। यह विस्मय उनकी काव्य प्रतिभा से पहली बार 'कंथा-मणि' के माध्यम से परिचय पाने से दूना हो जाता है। इतना तो मैं जानता था कि वे आत्मलीन एकनिष्ठ शब्द-साधक थे। पर वे इस साधना को ऐसी मनोरम काव्यभाषा दे सकते हैं—यह नहीं जानता था। 'कंथा-मणि' उनके निधन के पश्चात् प्रकाशित हो रही है। यह संग्रह उनकी संस्कृति यात्रा के अन्तरंग अनुभवों का अंकन है। किस प्रकार वे लोक-संस्कृति को अपने शास्त्रीय अध्ययन में पचा कर नया सर्जनात्मक रूप दे सकते हैं इसी का प्रमाण उनकी यह क्लासिक गुण वाली कविताएँ हैं। इनकी इन कविताओं की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह सहज, शाश्वत और समकालीन है। 'उन्नीस सौ सड़सठ' के गीत नाट्य में जिस प्रकार लोकशास्त्र, नाट्यशास्त्र और बाहर की वास्तविकता को एक आकुल ग्रहीता के माध्यम से एक-दूसरे से आश्लिष्ट कराया गया है वह केवल कुबेरनाथ राय की प्रतिभा कर सकती है। संग्रह में अन्तःकरण के चारों रूपों के संश्लेष मन, बुद्धि, चित्त व अहंकार इन चारों के संश्लेष और इन चारों के अतिक्रमण का अध्यात्म पृथ्वी-तत्व से ऊपर उठा हुआ अध्यात्म है, इसीलिए वह विश्वसनीय है। कभी भी अपनी उम्र की यात्रा में कुबेरनाथ राय धरती का आधार नहीं छोड़ते। वे कालिदास के मानस-चारि हंस की तरह धरती का सम्बल विस-किसलय लिए उड़ान भरती है। यह विस सलय को मानसरोवर को सौंपना चाहते हैं।

प्रकृति के साथ में कवि का संश्लेष वैसा ही है। 'माधवी रात', 'महावल्लीपुरम्', 'पुरीतट', 'मथान-गुड़ी', 'नदी और मैं'—ये सभी कविताएँ प्रकृति और संस्कृति के परस्पर संश्लेष की कविताएँ हैं। समुद्र हो, नदी हो, साज और चाँदनी हो, कवि इन सबमें एक तीव्र आध्यात्मिक आकांक्षा बढ़ते देखता है और उस आकांक्षा में अपना साधारणीकरण कर लेता है। जहाँ कवि संस्कृति के तार छेड़ता है वहाँ वह पूरे सरगम के बीच संवाद स्थापित करता है। परन्तु यह स्वीकार नहीं है कि वह वस्तुओं को, व्यक्तियों को, समूहों को, समूह के संस्कारों को उनके रचना व्यापारों को विच्छिन्न रूप में या असम्बद्ध रूप में देखा जाए। वह इन सबके भीतर के अदृश्य सूत्रों को अपनी संधायिका शक्ति से पारदर्शी बना देता है। यह अवश्य है कि इनमें से बहुत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सारी कविताएँ प्राचीन चीनी कविताओं की तरह या श्रीहर्ष जैसे शास्त्र कवियों की रचनाओं की तरह सन्दर्भ-बहुल हैं और पाठकों से विशिष्ट विविधता की माँग करती हैं, पर कवि के भीतर की तरलता कविता को सम्प्रेषणीय बनाये रखती है।

यह पूरा का पूरा ग्रन्थ विशिष्ट प्रकार का संग्रह है। इसे अपने ढंग का आधुनिक हिन्दी में नया संग्रह कह सकते हैं। इसको किसी कोटि के भीतर बाँधा नहीं जा सकता है। यह रचना विशेष रूप से कवि पाठकों को और चिन्तक पाठकों को सम्बोधित है। यह नदी का प्रवाह नहीं, गहरी नीली झील का संयत हिलोर है। ये पंक्तियाँ लिखते समय गहरा विषाद होता है कि यह संग्रह स्वयं पुस्तक रूप में कवि प्रकाशित नहीं देख सका। मैं अत्यन्त वाष्पगद्गद् मन से कवि कुबेरनाथ राय का स्मरण करता हूँ।

काशी
माघी पूर्णिमा, २०५३

विद्यानिवास मिश्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुक्रम

१. कंथा-मणि १
२. उच्चाटन २
३. माधवी रात (एक वैष्णव रात) ४
४. शिल्पी रात ६
५. जर्जर प्रार्थना ७
६. नीग्रो गुलामों का स्वर्ग-स्वप्न ९
७. लोकचित्र १०
८. उत्तर पुरुष उवाच १२
९. माटी १५
१०. मधुकरी १६
११. आगमनी १७
१२. प्रतीक्षा १८
१३. अपरा १९
१४. अपर्णा २०
१५. अपदार्थ २१
१६. अस्मिता २२
१७. अशीर्षक २३
१८. मथान-गुड़ी : संध्या २४
१९. प्रेम-पथ २५
२०. मन दर्पण से २६
२१. पुरीतट : चन्द्रोदय ३०
२२. स्वप्नभंग ३१
२३. हलायुध ३२
२४. कवि की प्रार्थना ३४
२५. तुम्हारी अश्लील नदी ३५
२६. सत्ताइस सितम्बर बासठ ३७
२७. फल्गुतट : तीन सानेट ३९
२८. तीन कविताएँ ४०
२९. तीन मुक्तक ४५
३०. उन्नीस सौ सड़सठ ४५
३१. एक नगर नागफनियों का ५७
३२. मोह-मुद्गर ७३
३३. महावल्लीपुरम् : समुद्र-कथा ७७
३४. पत्र उत्तराफाल्गुनी के नाम ८४
३५. नदी और मैं : एक प्रेम-कथा ८७
(१) पाहन मन नीलकंठ ९७
(२) सृष्टि कामरूपा : चर्यापद ९८
(३) माया की पालकी : चर्यापद ९९
(४) ग्रीष्म में महाकाव्य १०१
(५) प्यार करें १०२
(६) सुखावती : उर्वशी १०४
(७) मैं एक शंखमीन १०६
'नाम' १०९

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१. कंथा-मणि

उस दिन संध्या को
दृष्टि अभिसार द्वारा मैंने पहचाना तुम्हें पुनः पुनः
मैंने पुकारा तुम्हें मन ही मन बार बार!

अपनी ही सांत्वना के नये नये नामों से
यद्यपि पराजित क्षुब्ध राक्षसों ने किया था शोर
तो भी मैंने पाया तुम्हें अचानक उस संध्या को
जैसे अपनी ही दरिद्र कंथा के भीतर छिपी
कोई भूली उज्ज्वल मणि,
जैसे अपनी ही दरिद्र अनगढ़ भाषा के बीच
कोई प्रखर तेजस्वी अभिव्यक्ति।
अथवा धरती की जीर्णता के मध्य लब्ध
अनुत्तरा ऋतुओं की मधुमती ऋद्धि!

उस दिन अचानक तुम्हें देख कर
सहस्र-सहस्र चन्द्रमाओं की भव्यता में
धोया अपना मुँह बार-बार,
किया प्रशान्त-स्नान बारबार!
(चन्द्रिका भी कितनी क्षुरधार होती है)

तब मुझे लगा कि तुम तुम हो
यानी जन्मान्तर से मेरे भीतर ढकी अज्ञात कंथा मणि हो
जिसने मुझको ही सर्वसम्मत आज उद्घाटित किया है।
और तब उस अपूर्व सहस्रदल उद्घाटन को देख
उन लोगों की तिजोरियों में कैद,
खनकते सिक्कों ने किया था अश्रुपात!
और उद्धत अभिमानी अहंकारियों ने शीश झुका
किया था मेरा नमन बार-बार।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२. उच्चाटन

तुम जो लठैत गोपालक हुरियार रात्रिचर
तुम जो राज्यश्यालकों के मसिजीवी श्यालक कुलीन और तुम
अर्थात् विप्र भूसुर भूमार
और तुम जो राजन्यश्री बेइमान शक-हूण संतान।

तुम रक्खो इस धरा को अपने पास
कपट की रचना करो गरल की खेती करो
गंगातट अफीम खूब होती है
बाँटो अहिफेन जीभर
तुमको मुबारक हो
यह पुण्यभूमि शस्यश्यामल।

मैं तो
आदिम मर्म बेदना का एकान्त साक्षी हूँ
मैं उन कठोर करुमोर तीक्ष्ण दंत शिलाओं के बीच
हरीतिमा वर्जित उस भूमि पर रहते हुए
तुम्हारे कूट पाशों के प्रतीक करूँगा उद्‌घाटित
लिखूँगा हजार हजार वर्षों की संचित सुलगती
मार्मिक व्यथा का काव्य अरण्यमर्मर तालपत्रों पर
लिखूँगा मैं
हजार-हजार वर्षों से उनके टपके श्रमजल और रक्त से
अलंकृत उन्हीं की वेदना का काव्य जिन्होंने
बाहुयुद्ध करके तुम्हारी इस शस्यश्यामलधरा को
उद्‌घाटित किया था कभी; मैं लिखूँगा
आदिम श्वापदों, नर खादकों, मधुकैटभों से
हजार-हजार वर्ष जूझ इस मेदनी का उद्धार करने वाले
उन श्यामलगौरकाय दो पुरुषों की कथा
आदिम अरण्य से उनका बाहुयुद्ध
और उनकी हरीभरी महाकाव्यों की खेती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और इस कथा को हवा की गतिमान डाक
बाँट आयेगी।
उन्हें जो मेरे सहयोगी हैं बन्धु हैं
मेरे हृदय के टुकड़े हैं रामश्याम मोहन को
नाम वाले को, अनामा को
यह कथा हवा की डाक बाँट आयेगी
वे सबके सब साधारण जन
इस इतिहास की आदिम वेदना का मर्म समझेंगे
अर्थ गुनेंगे और विकल हो उठेंगे,
उनके अवरुद्ध पग–बाहु और कंठ।

उन ऊँची तीक्ष्ण शिलाओं के बीच मैं
करूँगा वास। त्याज्य है मेरे लिए हरित भूमि।
क्योंकि गंगा के शस्य भरे खेतों में विचरता है
शैतान! सरीसृप रूप धारण कर ग्रीष्म की
हवाओं में शाप मँडराता है आदिगन्त।

शोभा के मायामय शोभातट पर हरितश्याम
जम्बू शाखाओं में पातक छिपा बैठा है
लिच्छवियों की भूमि में अवदमित
प्रेतों का विहार है।

तो बन्धुओं रह जाऊँगा निर्वासित
उन तीक्ष्ण नुकीली कठोर शिलाओं की गोद में
लिखूँगा सूखे ताल–पत्रों पर वह असहाय कथा
जो शताब्दी दर शताब्दी पराजित होती रही
नये–नये भण्डों, धूर्तों, निशाचरों की नित नयी संहिताओं से।
और सही आदमी रहेगा सदैव पाँत का आखिरी आदमी
लिखूँगा वह असहाय कथा
जो एक दिन सृष्टि का जयगान बन जायेगी।

ये सूखे तालपत्र बोलेंगे बोल जो सहस्त्र कण्ठ बाहुओं में
उतरकर, एक जीवधारी शब्द बन जायेंगे।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३. माधवी रात

(एक वैष्णव रात)

(१)

चन्द्रवर्णी रात जैसे कोई प्रेमकथा
दूर किसी गाँव में गोकुल के
विलखता है एक स्वप्न प्रति रात
लिखते हैं ताल-पत्र उसे पुनः-पुनः
हवा दुहराती है बार-बार और
नाम ले ले उलूक करुण रव करते हैं
रात जैसे कोई भूली कथा।

(२)

चन्द्रवर्णी रात जैसे श्रीमद्भागवत
मन्द-मन्द फागुनी डोलती है
अश्वत्थ ध्यान तन्मय है
ज्योत्स्ना-हत जम्बुक कंठों ने
अभी-अभी ब्रह्मसूत्र पाठ किया;
फागुन की अर्धरात बाँसुरी
सारा वृन्दावन जग गया
रात ज्यों श्रीमद्भागवत।

(३)

चन्द्रवर्णी रात ज्यों मानस स्नान
मन्द मारुत शय्या पर सो रहा
ध्यान एक; देव लोक उतरा है,
राशि-राशि श्वेत पद्म-पाँखुरी।
कि डूब गये सारे घाट-बाट

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तारों का अरूप सुर रात का
श्लोक पट झिलमिल बुनता है
रात ज्यों दिव्य दृष्टि स्नान।

(४)

चन्द्रवर्णी रात ज्यों मन मधु कानन
चिकमिक बुंदकी चोला और चन्दन
नासिका पर रसकसी, दुग्धफेन वसन
दीठ बनी गोपी अभिसारिका
भूली पर बाट; मायावी था कानन
विलख रही माधव की मुरली
अब तो तू गल जा ओ हिया पाहन
रात ज्यों विह्वल वृन्दावन।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४. शिल्पी रात

चन्द्रवर्णी रात
गढ़ रही है काष्ठ चन्दन
मँह-मँह गन्ध फैली है

चन्द्रवर्णी रात
छीलती है काष्ठ
खोलती निर्मोक वल्कल
मलयगंधी मूर्ति का जो
काष्ठ के आदिम हृदय में
छिपी बैठी प्रतीक्षारत

चन्द्रवर्णी रात
गढ़ रही एक चन्दन काष्ठ
उभरती जा रही है
एक महाश्वेता रूपसी
ज्यों रूपसर से सद्य स्नाता
उर्वशी निकली
स्तोत्रनूपुर बज उठे सर्वत्र।

इस तरह ताकता मैं रह गया अनिमेष
क्षण-प्रतिक्षण।
बाँचता मैं रह गया इस रात को
क्षण-प्रतिक्षण।
मोर की पहली किरन, पंथ की बाँधवी
जो मुझे हलकी चपत दे कह गई सब राज
सारा मर्म उस शिल्पी रात का
ये उपकरण था मैं स्वयं
मलयगंधी काष्ठ था मैं स्वयं।

यद्यपि ताकता मैं रह गया अनिमेष
बाँचता मैं रह गया अनवरत, अविराम
उस मधुमयी रात को।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

५. जर्जर प्रार्थना

इस बार भी चैता हवा मधु के बान मार गयी
और बृद्ध जर्जर अश्वत्थ ने पुन: प्रार्थना के श्लोक रचे।
इस बार भी मधुमान सूर्य ने
हन-हन मारे मधु के बान
पलाशदेह पावक जल उठा रूपमय,
रसमसा गई लताओं की देह;
कोंचे-कोंचे टूसे-टूसे कंछी-कंछी सर्वत्र
तरुओं की नस-नस में मधुधारा दौड़ गयी
अपादमस्तक सिहर उठा मैं,
सिहर उठे मनुष्य और महीरुह, तरुलता, विरुध
युवा या अथर्वगात।
घासों में हरी साँस आ गयी;
क्योंकि चैता मधु के बान मार गयी।
अजी अश्वत्थ ने ये प्रार्थना के श्लोक रचे :

हे रूद्र करो प्राणदान!
तमाम नये पत्तों पर टूसों पर
झलक उठे झलमल ताम्राभ धूप
धूप पर रूप और रूप पर मन,
और मन पर यौवन की उज्ज्वल
असि-आभ चमक उठे
धूप रूप मन और यौवन को
मोहकता विह्वलता का
तृषा का मृग्जल का करो दान।

हे निशा विभावरी करो दान
अँजुरी अँजुरी भर यौवन मन और काम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चक्षु-चक्षु, पात-पात दीप बन जाँय
जल उठे फासफोरस का अंग-अंग
तुमको बेध दे कामना की तीक्ष्ण चक्षुधार
जैसे रसलुब्ध आवाहन आदिम इन्द्र का
मेघश्यामलोलुप। आग्रह किसी आदिम जार का
वैसा ही मन और यौवन, वैसा ही काम गरल
हमें महानिशा करो पुनः दान।

हे महिमान रस रामचन्द्र
सृष्टि सोमकला ढालो अंग-अंग
जीवन दो जीवन : तृप्ति और स्वाद
रस और प्राण! हे महिमान चन्द्र,
बरसो रस की फुही सहस्रधार
बरसो आरोग्य और आयुर्दाय
मैं जर्जर पर्णहीन शाखामात्र
तो भी मैं ही सनातन शिशु सहस्रमुख पल्लव खोल
आज बैठा हूँ,
ओ तरुविरूथों के रस के स्वामी
महिमान चन्द्र।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६. नीग्रो गुलामों का स्वर्ग-स्वप्न

भाइयों, वहाँ नहीं कंधे पर जुए हैं
न ताँबे के कड़े हैं न लोहे की हँसली है
न कमरबँधी शृंखला है न घाव है न घट्ठे हैं
भाइयों, वहाँ कोई ऐसा शृंगार नहीं।

भाइयों, वहाँ नहीं कोंचते पैने की नोक हैं
न सौ–सौ बेंतें हैं, न सपासप कोड़े हैं
न भूख ही अंतड़ियाँ चबाती हैं वहाँ
भाइयों, वहाँ कोई ऐसा दुलार नहीं।

भाइयों, वहाँ पर तो मौज है डेमोक्रेसी है
अह, रोटी के साथ नमक भी है, ईसामसीह भी है
और सबसे बढ़कर
नरम मन है कोंवर छोकरियाँ हैं, सांवले इशारे हैं

भाइयों, वहाँ कोई सरकार नहीं
भाइयों, वहाँ नहीं कंधे पर जुए हैं।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७. लोकचित्र

(१)

मैं था एक कीर्तिहीन पटुआ
मैंने उदासी का कोरा अशुभ पट चुना
तुमने हल्दी गोरोचन प्रस्तुत कर कहा
"आँको निज तर्जनी से, तमाम अतीत को
जिसका उपसंहार यह कोरा पट है रहा।"

(२)

मैं था एक गरीब मोटिया मजूर
तुमने मेरे ही दुर्बल कंधों को नायकों का
सबल बृषभकंध मान रख दिया एक
दुख का दुर्वह भारी जुआ, और मैं
अकेले हाँफता-हाँफता दुर्गम पथ चढ़ा
कंधे व्यथा से फटते रहे, पर लोगों ने कहा :
"देखो यह सिद्धहस्त सिद्धपग कारुनट
यह कितना अच्छा अभिनय कर लेता है।"

(३)

मैं था एक दुर्बल कण्ठ-कीर्तनियाँ
स्वयं बिकने को तैयार रामनामी ओढ़ बैठा था
इस मुट्ठी उदार पुण्य पण्यागार में
किन्तु तुमने कण्ठ में भर दिया बज्रावेग
मौन असंभव हुआ, कंठ अब फटा, अब फटा;
मैं अवश चिल्ला उठा; और लोगों ने कहा:
"यह तो काल की अधरलग्न तर्जनी से भी
वेपरवाह उत्तर पुरुष का प्रवक्ता है।"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(४)

ओ मेरी सिसृक्षा के सतीर्थ लोकचित्र
ये भलेमानस ये लोग जानते नहीं कि
मेरा सबकुछ प्रवंचना है, फांकी है, लाचारी है
जो सप्त है वह है मेरी अवशता, दुर्बलता और
आर्त्तनाद!

तर्जनी मेरी थी, कंधे मेरे थे, कंठ मेरा था
पर मणिबन्ध में, पांजर में सुषुम्नमूल में
सक्रिय संवेग, वह तुम्हारा था, देह हमारी थी;
निरन्तर जूझनेवाला मन वह तुम्हारा था
ओ मेरे निप्त सहचर!
लोकचित्र।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

८. उत्तर पुरुष उवाच

पिता क्षमा करो
फेंकता हूँ कंठलग्न यज्ञोपवीत यह
यह कंठलग्न मृत-सर्प बड़ा ही दुर्वह है।
मैं एक प्रकृति-सन्तान लघुमानव मात्र
तो भी थमा दिया तुमने महाकाव्यों का
धधकता अग्निपात्र, जिसमें
मृत मन्वन्तरों की हड्डियाँ जलती हैं
कि मैं उर्धवाहु ढोता फिरूँ सहर्ष
होड़ लूँ तुम्हारे द्रुतगामी नभचर
रथन्तर और बृहद् सुपर्ण बाजिराज से?

पिता क्षमा करो
यह दायित्व बड़ा ही दुर्वह है।
मेरे पिता तुम जानते नहीं
मेरे कंठ में अवरुद्ध वैखरी क्रुद्ध
जीभ पर स्फोट क्षत बन जाती है
(मेरे मुख में है घाव)
मेरे मस्तक में छटपटाते उद्गान
भीतर ही भीतर स्नायुकेन्द्र छिन्न-भिन्न
कर जाते हैं :
(ओठों पर चँपी तर्जनी)
मेरे हृदय में उमड़ते क्रोध समुद्र
दब कर शिरा-शिरा मथता है
(मेरे रक्त में है उद्दाम हाहाकार)
मेरे मनदर्पण की आकृतियाँ
मेरे ही त्राहि से चटककर टूट जाती हैं
(मेरा मन है, टूटे मृत्पायों की ढेरी)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेरी आत्मोपलब्ध अनुष्टुप–भंगिमा
भीतर भीतर गलित हो दुर्वाच्य बन जाती है
(ओह मेरी दुर्गन्धमयी भाषा!)

अत: हे पिता!
फेंकता हूँ ऋणात्मक उत्तराधिकार यह
मुझे अस्वीकार है तुम्हारा
देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण का
यह हिसाब–किताब!
इसी से फेंकता हूँ कंठलग्न यज्ञोपवीत का
मृत सर्प!
डबरे में, कचरे में, क्लेद पाप पंक में
आ गिरा है मनुष्य जाति का सूर्य
अश्रुपात कर रहा है मनुष्य जाति का सूर्य
विपन्न है मनुष्य जाति का सूर्य

अत: हे पिता!
यह लो तुम अपना महाकाव्यों का अग्निपात्र
मुझे उद्धार के लिए पुकार रहा है धरती का सूर्य।

इधर देखो :
क्लेद और पंक के भीतर अवरुद्ध असहाय
फंस गया है आज अपनी धरती का पवित्र सूर्य
हमारे और उसके परिश्रम का मधुमय सूर्य
अब मैं उसे धो–पोंछकर पंकमुक्त, बाहर उछालता हूँ
ऊपर स्थित हो सकेगा वह
नक्षत्रों के बीच औंधे मधुपात्र सा
अपनी ही पार्थिव महिमा से प्रतिष्ठित वह
जिससे झर–झर बरसा सके सोना और मधु
हमारी कच्ची उत्तरकालीन फसलों पर
हमारी सद्योजात उत्तरकालीन पीढ़ी पर
जिससे पकहर हो सके खेत यह, और
सार्थक हो सके यह धरती का जनजीवन।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेरे पिता!
मुझे नहीं चाहिए अपार्थिव, दिव्य उत्तराधिकार
अत: लौटाता हूँ तुम्हें अतीत के मृत्पात्रों का
धधकता अग्निपात्र!
मुझे क्षमा करो, यह उत्तराधिकार दुर्वह है।

[नेहरू युवा केन्द्र की स्मारिका से]

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

९. माटी

माटी,
मेरी दीन दुखी माटी,
तुमको शतशत प्रणाम।
मेरे ये बोल
दब गये माटी में भीगकर
दिल जब बरस पड़ा था।
हमने जाना
वे सड़ गये, बेकार हो गये
रही नहीं अब उनकी अर्थवत्ता।
और उसके बाद
अनेक उषा-संध्या
अनेक दिवस-रात
अनेक जागरण तन्द्रा की भाँवरे पड़ती गयीं
अनेक सूर्य-चन्द्रों की बलि होती रही
और होता रहा पुनर्जन्म
मैं बिलकुल भूल गया कि
मेरे थे कुछ प्यारे शब्द, प्रिय कथिकायें
क्योंकि वे भीगकर माटी में दब गये
उस दिन दिल जब बरस पड़ा था।

उन अगणित दिनों के बाद, मैंने देखा एक दिन
हरे-हरे नये-नये पात, वर्तमान की छाती फोड़कर
निकलते असंख्य सरौरुह शिला जात
उठता हुआ जीवन सगर्त-शक्तिमान श्वेत रक्ताभहरिताभ
जैसे एक श्रीहत हतभाग्य कवि के हृदय से स्वयं जात
नये-नये छन्द-श्लोक-गान
तब मैंने माटी को प्रणाम किया।

● [*कलकत्ता : कालेज स्क्वायर, 1958*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१०. मधुकरी

मौत की उन रस्सियों से
जीवन के एक सिर्फ सुखद क्षण की भीख माँगी थी।
हार के द्वार से साहस बटोर कर
सिर्फ एक पल की जीत माँगी थी।
छिन्नमस्ता अमामयी
कुहेलिका के नील आँचल से
एक किरण की फाँक माँगी थी।
माना कि ये सब चुप रहे
बेशील, आँखे बन्दकर, मुँह फेर
पर तुम भी तो आँख फेरने लगे
जब मैंने भीगे मन से
केवल पगधूलि माँगी थी।

[कलकत्ता : मेकलौड हाउस, 1958]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

११. आगमनी

यह अरुण पीताभ उज्ज्वल अवतरण
रथ और जयजयक़ार
मन का पानी चमक उठा
डूबने उतराने लगे, लघुबाल शतदल।

तुम्हारी यह धनुषटंकार
तुम्हारे रोष के ये पुष्प
स्नेह के ज्यों वाण बरसे
ढँक रहे मुझको सहस्त्रों फन पसार।

कल जब नभ से धरा तक
तुम्हारा प्राण पिघलेगा
तब फूल कांटे में उगेगा
नील धूसर वेधता वह शुक उड़ेगा
जिसका पंख दानव काट डाला था।

[*कलकत्ता : वेडेन स्क्वायर, 1959*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१२. प्रतीक्षा

मन की धूप
कब की भटक गई अनजान गलियों में
मन का हाहाकार स्तब्ध
    भीतर-भीतर कंठ दाब दिया

बाहर यह अशोक फूला है
बाहर दूर्वा का मुकुट पहन राह मुसकराती है
पर मैं खड़ा रहा
निहारते तुम्हारी बाट
जैसे कवि था खड़ा
उज्जयिनी के जन-मार्ग पर
किसी मालविका की प्रतीक्षा में
जैसे विधि था प्रतीक्षारत
नील नाभि पर
किसी के नयन पलक खुलने की चाह में
मैं खड़ा रहा वैसे ही
भीतर अपने को तराशता रहा
रचता रहा युगनद्ध मूर्ति
और बाहर शून्यपथ, शून्यनेत्र
तुमको पुकारते रहे।

[कलकत्ता : नेशनल लाइब्रेरी (अलीपुर), 1959]

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१३. अपरा

तुम्हारी अपरा छबि का ध्यान
तब मन में आता था बार-बार
ये बाग बगीचे पेड़ तुम्हारे, पीले सरसों के खेत
यह चुनरी तुम्हारी सबुज-पीत धरती-नभ के आर-पार,
जिसका आँचल मन में फहराया बार-बार।

अमराई के बांसों से हर-हर खड़-खड़ स्वर समवेत
ऊपर उठी तुम्हारे नभ में स्वर की एक बलाका।
पाँत-पाँत में उठते जाते श्वेत बगूलों के दल
दिशा-दिशा को मथता फिरता व्याकुल
कोकिल का पंचम; जब नभ में हँसती राका।

उन सबके भीतर पाया मैंने
तुमको ही बार-बार।
तुम्हारी अपरा छबि का ध्यान
किया है मैंने बार-बार।

[*1962*]

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१४. अपर्णा

यह काया है शुष्क काष्ठ, पत्रहीन छाया विहीन
इस पर शुक-पिक रैन-बसेरा न लें तो क्या?
पथिक ठीक ही है क्यों पछताने इस तक आयें
हर्ज नहीं, पथ भूले नहीं इधर मधु की माया।

जीवन पस्त रहा टूटता विरस अनुदिन
तब भी तो यह काया रही गान-मुखरा!
षट्ऋतुओं के रथ आये, फिर लौटे बार-बार
इस शुष्क काठ पर भी गन्धर्वों का गायन उतरा।

बन्धु, सदैव सरस का गान शुष्क ही है लिखता
अनगढ़ सीपी के अस्थिशेष में उजला मोती पलता,
यह काया है काठ तार जिस पर एक चढ़ा
जिस पर स्वर का वर्त्तिनाग अहरह जलता।
श्वेत रह गये छूँछे पानी गंदला बादल लाया,
पंकज खिलता वहीं जहाँ हो सुलभ पंक की माया।

[*1962*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१५. अपदार्थ

तो क्या हुआ यदि मैं जगत में रह गया अपदार्थ
राष्ट्र के, संसार के, परिवार के कुछ काम आया मैं नहीं।
हर्ज क्या यदि कुछ भी न पाया स्वार्थ या परमार्थ
कर्म का, संघर्ष का, जयगान का अभिमान कर पाया नहीं।

रेह ऊपर रेत में यदि कामना के बीज मेरे
अर्थ में बोये गये, रिक्त मुट्ठी रह गया मैं,
निरर्थक श्रम सींकरों में बह गईं परिकल्पनायें
मृत हुई संभावना, किस्मत रही आँखें तरेरे।

फिर भी तुम्हारा परस मिलता जब कभी
प्रात के उल्लास में, सांझ के उच्छ्वास में
सरल शिशु के रुदन में, वृद्ध के विश्वास में
वृषभ के हुंकार में, पहचान पाता जब कभी
यह सब तुम्हीं हो, शेष सब है व्यर्थ
अपदार्थ,
तब न मैं रह जाता अकिंचन दीन या अपदार्थ।

[*1962*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१६. अस्मिता

मेरे मन की गहन गुहा में एक असुर रहता है
निशिचारी परियों के शव को हृदय लगाये
मन को मारे शीश झुकाये दिन में बैठा रहता
प्रतिसंध्या को पा प्रदोष बल अट्टहास करता है।

मेरे मन के अतल नीड़ में नील बिहंग बसेरा
निशि की माया विहग-नीड़ को स्वर्णपुरी में बदले
जहाँ असुर के नजरबाग में झरे रात शेफाली
नभ में बिचरे पंख पसारे पाकर पुनः सबेरा।

मेरे मन के गुहागर्भ में एक पुरुष अविनाशी
गुडाकेश निष्कंप शिखा सा अहरह जलता
दिवस-रात की मेरी परिक्रमा का यह साक्षी है
मधुमाधव का रस आखेटक काष्ठ मौन सन्यासी।

असुर, विहग, सन्यासी तीनों सुहृद-सखा विश्वासी,
मन की मर्मकथा के ये तीनों हैं परिभाषी।

[*1962*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१७. अशीर्षक

नयन मूँदे अन्तर में तत्क्षण बही जाह्नवी वरुणा
शिरा–शिरा में प्रति धमनी में बूँद–बूँद मेरी पहचानी
मेरे अन्तर में जब्र जागा सहज चेतना का अभिमानी
कथा डुबोती नहीं तुम्हारी निर्मम विगलित करुणा।

भाई पलभर ठहरो मन का दुर्ग टूटता गिरता
कच्चे घट में स्नेहधार में तिरता प्रतिपल गलता
यह करुणा है ऐसी जिससे जग की दुखती रग को
आराम मिले लेकिन अपना तो अस्तित्व गला
रहा नहीं मैं वही दाँव आखिरी था जिसको
हार चुका, तुम हँसे और मैं खाली हाथ चला।

[*असमाप्त, 1962*]

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१८. मथान-गुड़ी : संध्या

वृक्ष–वृक्ष पर पत्र–पत्र पर संध्या सम्मोहन उतरा
उस पार गहन बन पर इस पार हमारी धरती पर
नभचारी श्वेत बलाकाओं के पंखों पर
शिला संकुलित हरित धवल जल पर तिरता उतरा।

स्वर की शब्दहीन आदिम ध्वनियों का कलरव
वन में पत्तों की झर–झर, फड़–फड़ उड़ते पंखों की
दूर चटखती शाखायें रह रह मत्तगयंद उतरते
मृगयूथों की पांत कहीं उस पार नदी तट पर।

तब भी साँवरी हवा के कानों में कोई बोल रहा
"री चुप–चुप धीरे से बोल न सुन ले कोई"
शब्द पिघलता अंधकार में शीश सटाये
जैसे प्रिया वक्ष से उठती सांसें सुनता कोई।

जैसे उस दिन बन्द कक्ष में लिये हाथ में हाथ तुम्हारा
मन कहता था, मन सुनता था, बाहर था स्वर हारा।

[*मथानगुड़ी का अभयारण्य, 1963*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१९. प्रेम-पथ

वृथा में इतना मत अभिमान करो
मेरा हिमशीतल अहंकार अब नहीं रहा
तुम्हारी सुधियों की वही फागुनी हवा
वसंता-तप में यह मन पिघला
जैसे वर्फ पिघली ओ उपल फूल
देखो न कभी का मैं
मन को काट-काट यमुना पिघला रहा
भूलो न अतीत को इस तरह
इतना मत मान करो
वृथा में इतना मत अभिमान करो।

मुक्तकेश सिरहाने झुके हुए
कोमल एक स्पर्श काफी है
पथ में दूर-दूर खड़ी रहो तुम
केवल एक पहचान दृष्टि काफी है
तिरछे नयन, मुख फेर कर ही सही
एक स्नेह अपांग काफी है
मेरी विनय को इतना लघु मत करो
मैं बहुत ही थक गया
अहं का संबल भी न रहा
तुम भी वृथा मत अभिमान करो।

[*1-1-62*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२०. मन दर्पण से

(१)

लेखनी वंध्या कभी नहीं रही
व्यथा तुम्हें मैंने कही
कालिमा सदा बही, घटा घिरी
अनुदिन तुम्हारी छटा सजी
लेखनी वंध्या कभी नहीं रही।

(२)

घोड़े कभी बैठते नहीं
सूरमा मुँह मोड़ते नहीं
कवि की कथा सुनो रे बंधु
दिल लगाकर तोड़ते नहीं
तब फिर चोट खा
बैठे मन को मार
मन के अश्व दौड़ाओ।

(३)

छायी थी घटा आज,
कटी रेशम की डोर
तुम्हारे चपल नयन की,
वयन की;
मन ने बढ़ाया हाथ
देखा तुम्हारा भ्रूभंग
सहम गया बच्चा बेचारा
अस्त हुई नभ की छटा।

(४)

यह कैसी कथा है
मर मर कर जी उठती ऐसी व्यथा है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तुम्हारा नयन रस
मेरा हृदय रस
मिले एक में जब
तो यह बनी थी कथा
जिसे बार-बार मैंने मथा
और पाया रतन यह व्यथा।

(५)

झनझन निचाट अमराई
सूनी दुपहरिया सूनी डगर
धूप में दूर मृगजल नाचता
मुझसे दूर मनमृग भागता
झनझन निचाट अमराई
बैठो न क्षण भर यहाँ
बोलो वचन दो एक
कटु मधु कुछ भी तो कहो।

(६)

डोर मत काटो तुम
ऐसा नहीं करते हैं
दो चार पल ठहरो
इतना जल्दी नहीं छलते हैं
ऊष्मा मिटाओ मत
अभी मत बहाओ ठंढी हवा
कुछ रोको तो इस धूप को, आँखों में
मत मुझे व्यर्थ यों बनाओ तुम।

(७)

ठहरो न दो पल
मन को ऐसे न हराओ प्रिय
पार नहीं लगना है
तार नहीं बुनना है
साज नहीं गढ़ना है
चंग नहीं चढ़ना है
मेघ नहीं गहना है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रह जाना है रिक्त-रिक्त शून्य हाथ
जानता हूँ खूब इसे
कल तो डूबना है ही
फिर भी आज ही अभी मत
डुबाओ प्रिय।

(८)

वौरों के गंध से भरी-भरी
कल जो आयी हवा
तुम्हारी साँस से भरी-भरी
कल जो आयी हवा
साँसों का मधुमास छाया तुम्हारा
बाँधो उसे पलभर और
जीने दो मुझको छणभर और
मत तुम पूर्वा बहाओ अभी
लगाओ न नयनों में अंजन अभी
क्षणभर और प्रिय
बहने दो साँसों भर यह हवा।

(९)

पीकर नयनों का रस
लग गये प्राणों में फूल
लग गई स्नेह की बालें
लग गया खेतों में दाना
पौधों के तन में रस लहराया
फिर पाकर साँसों की गरमी
हो गया पकहर दाना
प्यार की मैंने की खेती
ऐसे में आँखों से हिम बरसाओ।

(१०)

रातभर छाये रहे गन्दे ये बादल
सबेरे अचानक बरसी यह घटा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धुल गयी मन की सारी मैल
छिटकी खुशी की धूप
नैनों में हँस पड़े जंगल
बाजी तुम्हारी छबि की बंशी
गमका मेरी व्यथा का मादल।

(११)

तुम हो मन का दर्पण
चुपचाप मैं पड़ा रहा
मन को कस कर गहे रहा
दिल के नीर में आँखे धो-धो
निर्मल करता रहा
तुम्हारा यह दर्पण
जो तुम हो ही स्वयं मेरे प्रिय
मेरे प्रिय तुम ही हो मेरे मन का दर्पण।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२१. पुरीतट : चन्द्रोदय

मिस चन्द्रमा मुखर्जी
आज तो जँचती हो ऐसे जैसे प्रतिमा
डूब जाती है शाम रात के सागर में
पानी सा मन छलक छलक जाता
मन की गागर से
तब मिस चन्द्रमा मुखर्जी
मन एक लिखता तुम्हारे नाम अर्जी
यद्यपि जानता हूँ तुम हो क्षय तुम हो क्षयी
फिर भी लिखता हूँ
प्रतिदिन,
प्रतिमास,
प्रतिवर्ष,
आगे तुम्हारी मर्जी;
ओ मिस चन्द्रमा मुखर्जी।

[पुरी : 1964]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२२. स्वप्नभंग

मेरे पिता लाचार
जिन्होंने मुझे जन्म दिया
कि पीने को जहर दिया
और कुछ हथकड़ियाँ गढ़ीं
जिन्हें मैंने अकारण वरण किया
कायर पिता, धन्यवाद।

मेरे कवि निर्विकार
जिन्होंने गीतों का दंश दिया
कामक्रोध को छंद दिया
कोमल लिजलिजे अश्वासनों का
मोहक अन्तर्द्वंद दिया
कपटी कवि, धन्यवाद।

मेरे गुरु महामतिमान
ब्रह्म ऋषि, राज ऋषि, लोक ऋषि
सभी ने मिलकर एक चौखट गढ़ा
और शब्दों की निर्मम कीलों से
उसी में मुझको ठोंक दिया
ऐसे कि आज मैं
सत्ता नहीं संज्ञा हूँ
वंचक गुरु, धन्यवाद।

[*31.1.65*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२३. हलायुध

मेरे दोस्त मेरे कंधे पर यह जो है
वह सलीब नहीं!
प्यारे, हरएक काठ सलीब नहीं होता है
हर एक आदमी मसीह नहीं होता है
यह मेरे कंधे पर है
कर्ण के कवच जैसा जन्मजात
जन्य सहचर; आदिम–अस्त्र
पराक्रमी हल है।
जिसके पराक्रम के माध्यम से
सहजवंध्या धरित्री में सगर्व शक्तिमान
आत्मा के फूल फूटते हैं
मणिभोगी रक्तपायी होते हैं निर्वंश
और शत्रुओं के म़हल होते हैं
क्षार–क्षार
युग प्रतियुग एक ही कथा दुहराते हैं
सभी इसी हल से प्राण त्राण पाते हैं
यह हल है धरती की वन्ध्या योनि तोड़ने को
सीता उत्पन्न करने को
रावण नष्ट करने को।

अत:
मत गलतफहमी करना प्यारे दोस्त
यह तुम्हारा क्रीड़ा सलीब नहीं
सँभल कर छूना इसे
यह काष्ठ का लौहफलक युक्त
हलधर के बेटों का हल है
परम प्राचीन पुण्य पराक्रम हल है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और क्रोध आने पर
इसी की नोक पर खींचकर
तुम्हारे हस्तिनापुर को उखाड़
गंगा–यमुना में फेंक सकता हूँ;
यह हलधर का हल है
तुम्हारा क्रीत सलीब नहीं।

[*1964-65 में गंगा–गोमती के कोण पर सम्पादक : डॉ. जितेन्द्र नाथ पाठक में छपी*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२४. कवि की प्रार्थना

मेरे ललाट के मध्य बह रही वैरिणी
एक विरजा नदी
उसी में निरन्तर स्नान करती एक कन्या
स्वप्न संभवा कन्या
बार-बार, बार-बार
फिर हंस बन उड़ गई कन्या।
ओह नदी तू वैरिणी।

कि हंस बन उड़ गई कन्या
किसी सुदूर हस्तिकान्त देश में
या किसी काम्पक वन, अथवा
सिंहल द्वीप में, वह कन्या
हंस बन, फूल बन, तारा बन
अथवा स्वप्न बन
विचर रही होगी वह कन्या
विरजा कन्या

ओह तू रूपान्तरकारिणी सर्वभक्षी
वैरिणी विरजा नदी।
वह रहा प्रतीक्षारत धार में स्मृति के पत्र-पुट
अश्रु और प्रार्थना के दोने और
नामांकित कागज की नाव
कि शायद एक दिन
जन्मान्तर के आह्वान सुन
फिर इसी नदी की धार में
कमल-वन का प्रस्फुटन हो जाय
वह नाम और उस नाम के मध्य
वह पद्मसंभवा विरजा कन्या
सर्वभक्षी नदी तू
मेरी प्रार्थना स्वीकार कर।

●

[1967]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२५. तुम्हारी अश्लील नदी

अपनी विरजा नदी के जन्मस्रोत पर
बैठा है आरक्त चक्षु महिष एक
हँकड़ता, डकारता गटागट
सारा जल
पी जाता है।
जब से सृष्टि जन्मी
अर्थात् मैं जन्मा
तभी से यह काला महिष
जन्म सहोदरा नदी के स्रोत पर
भूत की तरह डटा है
गटागट सारे जल का पान कर जाता है
इसका आदिगन्त काला विकराल मुख
इसके रक्तवर्ण नेत्र, फुफकारते थुथुने
ऐबी सींगों पर झूलते इन्द्र, वरुण, दिग्पाल
यह जीवन से जुड़े अमोघ शाप की तरह
अनुक्षण नदी स्रोत पर डटा रहता है
कर जाता है सारा जल गटागट पान।

और यह नदी असहाय है
नदी है विरजा पापहरा
परन्तु असहाय है
तुम्हारी अश्लील नदी है।
दूसरी ओर
प्रिय मित्र! बह रही है परम प्राचीन।
अगाध जल से भरी हुई मुक्त वेणी इतराती हुई
पिता-पितामहों के पोसे हुए भेड़ियों की
टमटमाती जीभों से जो था कभी बहा लार
वही विषाक्त कर्मनाशा बन
बह रही है आज।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बजबजाता फेन कुत्सित थक्के गाज
आह, यदि तृषा है तो करो पान
चाहो तो पीओ भेड़ियों का मुखस्राव।
छककर पीओ छूट है छूट
ताड़ी है, बड़ा मजा आयेगा।

अरे ऊपर मँडराती मांसभक्षी चीलें
बन जायेंगी छोरियां कमनीय
काक बन जायेंगे कलकंठ किन्नर
मेला, महोत्सव जुड़ जायेगा यार
ओ प्यारे जीव हंस
पिता पितामहों का दान यह
कर्मनाशा कीर्तिनाशा बड़ी ही चटुल
और नशीली है।

भूल जा मानसी विरजा को
मुक्ताभक्षी जीवहंस!
तुम्हारी इस अश्लील नदी में
नग्नगात स्नान करके
मैं मानता रहा अपने को
आजन्म धन्य।

[*1967*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२६. सत्ताइस सितम्बर बासठ

मैंने सुना कल रात
अपनी
इस धरा का प्रेम पुलकित गान
अपनी धरा का रोषमय आह्वान

मैंने सुना कल रात
ओ उर्वसीयम–उर्वशी,
तुम्हारे नयन में सोते हुए
चीड़ श्यामल साल के कान्तार
आदिम नींद तज
कल उठ खड़े हो चल दिये
कल मूर्छा कटी
कल चमकी धरा–आकाश
कल तुम्हारे स्नेह स्पर्श से
हो गयी मोहक अधिक
एक मुट्ठी बर्फ
एक मुट्ठी घास

मैंने सुना कल रात
बहुत दिन के बाद कल मध्याह्न
तुम्हारे तन गये भ्रूबंक
बहुतों ने लिया उर चीर
क्षण में अनेको ने
लुटाया शीश

रक्त ने दी तुरन्त
बन्धु की
सन्तान की पहचान
कि तुम्हारा प्यार है न अनाथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी से हंसने लगी लद्दाख की वह बर्फ
इसी से हंसने लगे आसाम के कान्तार
रक्तसिंचित
स्नेह पिघलित
जननी महीसे
धरती प्रियासे
आधी रात को उठने लगे कल
कुछ प्रेम पुलकित गान,
—कुछ रोषमय आह्वान

[२६ *सितम्बर को नेफा (उर्वसीयम) पर चीनी आक्रमण हुआ था। यह कविता दूसरे दिन लिखी गयी थी — २७ सितम्बर १९६२ को*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२७. फल्गुतट : तीन सानेट

सूख रही नदी अनावृत, नग्न और निर्जन तट
यह उदास कंकाल सृष्टि का, कालपुरुष की भाषा
जेठ दुपहरी दूर-दूर तक फैली हुई निराशा
कई, दलदल, कीट कुछ नहीं शेष नहीं कोई तलछट।

यह थकान यह तीव्र पिपासा इसी रेत को कर दो अर्पित
मित्र, करोगे क्या आखिर यह पथ ही है बन्ध्या
वीतराग निर्वेदमयी सब जेठ दुपहरी पावस संध्या
सारी ममता और सफलता करो इसी को सहज समर्पित।

मधुपायी वे मीत अनेको सब अपने से छले गये
वह कवि भी जिसने शैल बालिका का निर्मल तप देख
वे सबके सब जो तृषा लिए आये चले गये
चाक्षुष या वह भी जिसने नापी यह अंधी पथरेखा।
सब भ्रान्त रहे सोचे, उस पार हमारी भूख प्यास की धवती
इसीलिए यह पड़ी रही, रही शापग्रस्त जीवन की परती।

[*'आवेग' से*]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२८. तीन कविताएँ

तुम्हारी दक्षिण पाणि

वधू, वह संशय की रात थी :
हम और तुम
परस्पर आहत बैठे रहे जैसे
प्रश्न और प्रतिप्रश्न।

पश्चिम दिगन्त-रेखा पर अस्त होते रहे दिव्य महल
झलमल कंगूरे और कलश। सर्वभक्षी अन्धकार
करता गया ग्रास। हम सुनते रहे लगातार हवा में
रक्तपायी चमगादड़ों के झपट्टे बार-बार।
अचानक तुमने कहा, 'अँधेरा अधिक हो गया'
मैं चुप रहा। ..... तब तुमने फिर कहा, 'देखें क्या है समय?'
और तुम्हारी दक्षिण पाणि उठी, रोशनी की एक मूँठ जैसी
आश्चर्य तुम्हारे हाथ से झरते प्रकाश-वलय की—
वज्रहीरक-द्युति में मैंने पुनः देखा

एक कुत्सित गोमेदवर्णी सरीसृप विषाक्त
तुम्हारे ही दक्षिण पग को स्पर्श करता हुआ
सरकता आ रहा, निकट अतिनिकट, मेरी ओर!
कि तुम्हारी दक्षिण पाणि से झरती एक मुट्ठी रोशनी की चोट खा
वह नतशीश, लज्जावनत, बिफर रहा धरती पर।
वधू, वह थी संशय की रात, वह था संशय का सर्प
और सर्प वह मारा गया!
वधू, तुम्हारी भास्वर दक्षिण पाणि मुझे दे गयी
अभय और त्रासमुक्ति
स्तब्ध हो गयीं रक्तपायी चमगादड़ों की चीखें
और घनीभूत अन्धकार साँसों की कविता जैसा सुखद हो गया!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुख, अतिशय सुख

मैं था उस दिन असहज, अति असहज
मैंने तुम्हारे आयत चक्षुओं में देखा एक प्रमत्त नागिन
जो अपनी ही छाया को डँस-डँस लहराती है!
मैंने कहा, मैं हूँ विकल, अतिविकल
तुम्हारे संशय-सर्प तुम्हारा ही अमृत पीकर
तुम्हीं को बार-बार डँसते हैं, परन्तु देखो, आश्चर्य,
दंश तुम पाती हो, लहर मुझे आती है
मैं विकल, अतिविकल! मैं चला जाऊँगा
ये सर्प तुम्हारे अंग-अंग का अमृत चूस डालेंगे।
और तभी तुम्हारी आँखें हो उठीं नम
बाष्पाच्छादित लोचनों में उतर पड़ी प्रीति
एक अनुकम्पा, एक अद्भुत दाक्षिण्य,

तब मैंने देखा, तुम्हारे चक्षुओं से उतर
अंग-अंग विचरते वे कालसर्प बन गए छन्द,
स्रग्धरा, मालिनी, वसन्ततिलका चटुल
मन्दाक्रान्ता, शिखरिणी और चपल अनुष्टुप्।
सारे ललित छन्दों का मेला उतर आया—
तुम्हारे श्रीअंगों पर
जब तुम्हारे दो लोचन हो उठे प्रीति से आर्द्र
ओ प्रिया स्वाती!
तुम्हारी क्षणदृष्टि की फुही से सारे दंश बन गए।
सुख, अतिशय सुख!

कैसे हो?

प्रिय सोनल, तुम्हारी कथिका ही वैसी थी!
बहुत-बहुत दिन बाद
उस दिन तुम मिली थी अचानक पथ पर
मुझे लगा कि अगल-बगल झाड़ियों से चीते और बाघ
धूर्त्त नेत्र एकटक देख हैं रहे, हमें और तुम्हें।
काले रीछ मुँह फाड़ने लगे बार-बार।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु सोनल, क्या यह नहीं आश्चर्य?
कि तुमने पूछा, 'कैसे हो?' कि तभी वे काले रीछ
लज्जित हो, हो गए नतशीश। बाघ और चीते बड़े प्यार से
आकर चाटने लगे हमारे घुटने और पाँव।
तुम्हारी आँखों से छूटी थी पहचान की ज्योति
तुम्हारी नन्हीं-सी कथिका 'कैसे हो?' दे गयी अभय
कर गयी मुझे अयाच और मृत्यु ने भी रख दिया उस दिन
अपना खातापत्र एक ओर, चुपचाप सुनने लगी कविता,
वह अशब्द कविता, जो दो शब्दों से छन्द-प्रतिछन्द बनती गयी।

[नलबाड़ी कॉलेज, नलबाड़ी (असम)]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२९. तीन मुक्तक

पराजय

टेर-टेर मैंने लिखे गीत
पर आये नहीं मीत
गीत दमदार रहे— पर भक्त दुमदार नहीं
कवि ने तो कहा ही है—
(पर मैं ही नहीं मानता था)
प्रिय, तुम्हें भी सता रही कलि की रीति।

उर्ध्वबाहु

उस गुरु ने कहा—
"बहुत दिनों तक, गहरी घाटियों में छिपी मोहि तूने देखी है
बहुत, बहुत दिनों तक
सूखी स्रोतस्विनी में भटक-भटक कर मृगजल पिया है,
अरे तू
अपनी ही क्षुद्रता में बँधा अनजान
तू ही है सहस्त्र सूर्यों का सहचर बन्धु
अपनी ही बाहुओं में सहस्त्रधार सृष्टि स्रोतस्विनी बाँधे हुए।"
—कहा उस गुरु ने शिष्यों से भुजा उठा
"फिर भी तुम मेरी बात नहीं सुनते!
वह अरण्य से टकराती है
फिर लौट आती है
छू दी, मृतक-श्वास, अर्थहीन
लज्जित, कातर, और अति दीन।"

एक कामेडी

'तू एक पत्ता उड़ाता हवा में
तू क्या जाने लघुबीज की बात!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह लघु
वह क्षुद्र
वह दीन-हीन
पर दिल में अनागत के
हरे-हरे बिराट को सँजोये हुए
वही है भविष्य का वेधा
वही है नये सृजन का पिता।'
जब तूने सुनी यह बात
तू
अकड़ा
कूदा
फुदका
और चढ़ गया हवा की डोर पर
उच्च स्वर से चिल्ला उठा—
"सुनो, सुनो, मैं अपराजेय
मैं चराचर वर्त्तमान का स्वामी
यह बीज, भविष्य का अस्तित्व,
क्या जाने आज का सृष्टि तत्व?
कभी देखा भी है?—
नाता इस झंझा का उन्मत्त नृत्य!
कभी सुनानी है?—
उस पर उमड़ती हुई शंख-ध्वनि वर्त्तमान की!"
कि एक झोंका
उधर से आया उसे
ला पटका जमीन पर।
बीज देख यह हँस पड़ा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३०. उन्नीस सौ सड़सठ

कविता १९६७ के चुनावोपरान्त अकाल के परिवेश में गत मई–जून में लिखी गयी है। मुझे लगा कि कविगण जिस वसन्त की पालकी को ढो कर इस वर्ष लाये हैं, वह आहत, जर्जर और रुग्ण वसन्त है। मैंने अपनी सारी आशंकाओं को कविता में व्यक्त किया। इस बीच एक से एक जघन्य घटनाएँ घटी हैं और जघन्यतम घटना घटित हुई है 'राजभाषा संशोधन बिल' की। यह तो चीनी आक्रमण से भी पापपूर्ण घटना है।……१९६७ के सम्पूर्ण चित्र को जब सामने रखता हूँ तो लगता है कि कविता प्रकाशित करा देना अनुचित नहीं होगा। कविता का पहला नाम था 'बीमार वसन्त की पालकी', पर ऐतिहासिक सन्दर्भ को स्पष्ट करने के लिए उपर्युक्त नाम चुना गया है।…… एक बात और, कविता में '२० बरस की छोरी' से तात्पर्य 'डेमोक्रेसी' से है और 'राजा' या 'रानी' या 'इन्द्र' शब्द व्यक्ति नहीं बल्कि 'सरकार' के प्रतीक हैं।

—लेखक

(क) पूर्व रंग

भरत मुनि

"बिहरइ हंस जुआणओ!
प्राप्त सहचरी संग पुलक प्रसाधिताङ्ग :
स्वेच्छाप्राप्तविमाना विहरति हंस युवा।"[१]

सूत्रधार

अरे, इस बार तो बेकार ही 'चर्चरी' गाते हो।
खेत खाली हैं, खलिहान उदास हैं।
जंगल में मरे हुए पत्तों का ढेर है
जिस पर सुनसान भी दबे पाँव मन्द मन्द
चलता है— हाँ, कभी–कभी चक्कर
काटते बवण्डर घूमते हैं दिन में;

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दोपहर मौत बतास में घूमती है।
गो कि,
हर साल पतझर में पत्ते गिरा करते थे
पर कुछ दिन बाद ही, फाल्गुनी, वधू बन
आ जाया करती थी और तब जंगल में
मंगल होता था
परन्तु, इस बार?
इस बार तो आकाश ही जवाब दे!
क्या होगा? क्या होगा? और
क्या खायेंगे? क्या गायेंगे?

भरत मुनि

(गीत)

आ गयी फागुनी!
सेमल पलाश से लाल हुआ जंगल
आ गयी फागुनी!
शोभा की लपट उठी, हताश यह मन गला,
सोने सा पिघल बहा, धरती अकास-गिरि-
कानन में, कितनी बार मरा
मैं कितनी बार जिया
रात के निराले चरवाहे का वंशी स्वर
बुलाता है बार-बार, अभिसारिका फागुनी
वधू-वेश राधिका फागुनी!

सूत्रधार

जरूर है वह अभिसारिका और शायद
तुम्हीं वह खूबसूरत नायक हो! अरे,
जब से तुम्हें इन्द्र ने निकाला दरबार से
जब से तुम्हें संगति मिली दुर्वासा की
तब से तुम्हारी आँखें और दिमाग कहीं
चरने चले गये। इसी से दिखाई नहीं पड़ता है।
अरे, ये खेत हैं अथवा कफन ढकी लाश?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उदास है दुनिया, उदास है जहान और
तुमको रही है वरण कर वधूवेश फागुनी?
लीला वधू का शौक अभी बाकी है, सचमुच
बुढ़ापे में बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है!

भरत मुनि

अरे तेरे ललाट पर बचपन में
चेचक हुई थी, तो रुई और दूध का
फाहा दे देकर मैंने ही ठीक किया।
पर बेटा, तभी से तुम्हारी आँख तीसरी
जाती रही! शायद इसी से तू सब कुछ
देखकर भी देख नहीं पाता है। अभी-अभी
पीला पत्ता गिरा और वह कह गया :
"लो, मैं भी चला; यह शिशिर भी गया,
आशीर्वाद है उन नन्हें और कोमल
पत्र-शिशुओं को, जो अब यहाँ आयेंगे।"
और वह फागुनी, अभी दो क्षण पूर्व
कंधे से खिसके आँचल सँभालती
कहती गयी है : "अभी आती हूँ। पर देखूँ
इस बार भी क्या पहचान लेते हो मुझे
सिर्फ वेणी के फूलों की गंध से!"

सूत्रधार

मैंने देखा नहीं, सुना नहीं, हम नयी
पीढ़ी के, देखते नहीं सुनते नहीं
हम तो सिर्फ पढ़ते और जानते हैं।
देखना सुनना और दिनरात मग्न—
नयनों के युद्ध में रहना यह सब तो
उस युग की आवारागर्दी है जब कि
मृगमांस, मेरय, दही और मधु
के साथ कोमलवपु षोडशी और
'मेघदूत' काव्य— सर्वजन-सुलभ थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु भई,
राशन कार्डों के युग में आवारागर्दी तो
चल नहीं सकती। इसी हमारी तो
आदत नहीं, नयनों की भाषा पढ़ने की।
हम तो पढ़ा करते हैं इशारे बवण्डर के
जो घूर्मित पीत पत्रों में काटता है
चक्कर और ढोता है शब्दों की शिविका।
और इस बार?
इस बार तो समझ लो कि पेड़ों की
डाल-डाल पर वाक्य और शब्द ही
गुच्छे के गुच्छे लटक जायेंगे और मैं
पढूँगा उन्हें जीभर करूँगा प्यार।
पर तुम मोह-मूढ़ गाते रहो 'चर्चरी'
खेत खाली है, खलिहान खाली है
किस्मत खाली है, दिल खाली है
क्या होगा?
...... आकाश ही जवाब दे!
(नेपथ्य में दो स्वर प्रश्नोत्तर रूप में)
ॐ कृतो स्मर!
(हे प्रभु, हमें अब स्मरण करो!)
ॐ कृतं स्मर!
(हे प्रभु, हमारे कर्मों का स्मरण करो!)

(ख) संहार-ऋतु

सूत्रधार

खबर है, खबर है, सुनो तुम ध्यान से
सूरज और शिशिर में दारुण संग्राम हुआ
सूरज अकेले लड़ा; अंग-अंग-आहत जर्जर;
पर तटस्थ रही इन्द्र की वारिद-वाहिनी;
हरीतिमा हार गयी, जीवन हार गया;
कामरूप मधुवन के कुलीन नीच
भृत्यों ने धोखा दिया; खड़े रहे;

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऐरावत खड़ा–खड़ा लेता रहा मौज
जूझता रहा सूरज अकेला; परन्तु
धरती का धूम और पानी सोखकर
दिन–ब–दिन मोटे हो रहे मेघों को
तमाशबीन मेघों को शर्म नहीं?
तारुण संग्राम हुआ— ताल पर ताल
चोट पर चोट, घूँसे पर घूँसा;
दलक गये जमीन और आसमान!
परन्तु सब व्यर्थ हुआ! व्यर्थ हुआ!
स्थापित, जमा हुआ, सभ्य ऐरावत भला
पथचारी पदचारी सूरज की पाँत में
खड़ा हो क्यों करे समर? अरे, वह तो
रानी के छत्र और चामर ढोता है!
सूरज तो दिन भर पैदल खटता है,
मामूली है, मजूर है, घोर हिन्दुस्तानी है!
दोनों में जलज और जोंक का नाता है।
इसी से ऐरावत खड़ा रहा मौज से
और सूरज अकेला जूझता रहा!
खबर है सुनो सुनो ध्यान से
सूरज आज घायल है, अंग–अंग जर्जर है।
इसी से वसन्त है रूठ गया; उसका भी
दिल ही टूट चुका सूरज की हार सुन।
अब नहीं फागुन में फूटेंगे फूल कभी
मलिन वस्त्र दीनमुख कह गयी
फागुन की फाल्गुनी, आज ही सुबह–सुबह
'वसन्त बीमार है, इस वर्ष नहीं आयेगा!'

(नेपथ्य में कोमल स्वर)

[द्रुमाः सुपुष्पा सलिलं समद्मं
स्त्रियः सकामा षवनः सुगन्धिः।
सुखाः प्रदोषा दिवाश्च रम्याः
सर्व प्रियं, चारुतरं वसन्ते।]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओह–ओ! तो बूढ़े भरत मुनि गाते हैं
बूढ़ा लाचार है आदत से क्या करे?
मैं भी द्वापर में खूब गाना गाता था
ओह, कैसा खूबसूरत वह द्वापर था!
मेरे शीश पर मकरचूड़ स्वर्णमुकुट
हाथ में फूलों का धनुष बाण
पुरी का समुद्रतट; मोहन और मारण के
वंशी स्वर; आर्त्त और वासनाविह्वल;
कर रही लहरों में स्नान वसनहीन—
चाँदनी— हाँ, मिस चन्द्रमा मुखर्जी, इसी से
समुद्रतट आर्त्त और वासनाविह्वल!
मेरे शीश पर मकरचूड़ स्वर्णमुकुट
मेरे हाथ में ··· पर वे दिन और थे!
मैंने अपने मन से कहा : पर वे दिन
और थे; हम और तुम और थे।
पर आज? आज तो मेरे हृदय में
पल रहा क्रोध का एक महाकाव्य,
इसी से मुझे तो सारा रसशास्त्र ही
भूल गया बिल्कुल। और इसी से
फागुन में अगहन का गान मैं गाऊँगा।
'हँसुए के व्याह में खुरपी का गीत'
नहीं नहीं हँसुए का गान, शुद्ध शुद्ध
लोहे की हँसिया का विरह काव्य!
वक्र और धारदार लोहे का विरह काव्य!

"अरे भाई, अगहन रे!
मेरे आँगन चन्दन का पेड़
उस पर बैठे कोई न काग
मेरे माथे लाल सिन्दूर
कोयला लिक्खा मेरा भाग
खाली खाली हो गये खेत
सूना सूना रहा सिवान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खाली खाली रह गया पेट
खाली खाली साँझ बिहान
पियवा गया रे राउरकेला, छाती पर उबले अदहन रे!
यह निर्मोही अगहन रे!''
कहो मित्र? कैसा रहा गान यह?
क्या कहा? 'बन्द करो असमय यह,
फागुन में अगहन का गान यह,
बिल्कुल बेमौसम है', अच्छी बात है।
मान लिया मौसम का नाट्यशास्त्र;
ठीक है। सुनो तब फागुनी काव्य :
दूर कहीं बज रही वंशी, हवा भी
कोमल है, पुलकित है; कालिदास कविश्रेष्ठ
गाते 'ऋतु से संहार' के श्लोक कहीं।
आज 'संहार ऋतु' तुम भी, लो सुनो :

(गीत)

''बीस बरस की छोरी!
मेरे कंधे पड़ा जुआ, गले प्यार की डोरी
वन में आज पलाश रो रहा
शीश पटक कर पाप धो रहा
पटा खून से जंगल जंगल
फिर भी,
कोई गौरव–बीज बो रहा
गौरव जब फसल उगेगी
काट बटोरेगी यह गोरी।
ओ री! बीस बरस की छोरी!''
सुन चुके फागुन के काव्य तुम?
ओह यह जनता है; आदत पड़ी है
उत्सव मनाने की, फागुन का नाम ले
सालभर जीती है। क्यों नहीं?
'एहि आशा अट्क्यो रहै
अलि गुलाब के मूल…'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कवि ने कहा है, सो ठीक है।
पर इस बार तो वसन्त बीमार है
ताजी खबर है, कह दिया घर घर
फिर भी जनता है झूम झूम फाग
गायेगी; आदत है; सुनो सुनो
दूर कहीं ढोलक है गमक रही
अथवा घुड़क रहा तबला, सुनो सुनो

(नेपथ्य में होली–स्वर)

(गीत)

"सुन मन्दोदरि रानी, सुन दशकंधर राजा
कपिपति रीछं निशाचर राजा
सभा विराजे सकल समाजा
राम तुम्हारे लखन तुम्हारे
आकाश बजाये बाजा
भये पवनसुत दास तुम्हारे जगत भरे अब पानी।
सुन मन्दोदरि रानी
सुन दशकंधर राजा!
छज्जे छज्जे मोर नाचता, आँख आँख में पानी
ऊपर ऊपर काल नाचता, रोवें चौदह प्रानी
चौके चौके बिल्ली रोवे, वन में रोवे काग।
राह राह में मानुष रोवे, फूटा सबका भाग।
'पूरब पश्चिम आसे
तब सिंहासन पासे'
खर सूकर की बनी है जोरी
सकल सभा की मति भई भोरी।
दो कौड़ी के बिकी पीठ रे, धिक धिक हाय जवानी।
सुन मंदोदरि रानी
सुन दशकंधर राजा!
आकाश बजाये बाजा!"

(विविध स्वर : क्रुद्ध भीड़ जैसा कोलाहल)

"तब कहो क्या करे? क्या करे?
गायें हम फागुन के गान अब?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मँहक उठा माधव मास अब?"
"बन्द करो बन्द करो वर्त्तमान!
थूको अतीत पर केवल भविष्य ही
प्रगतिशील चर्चा के योग्य है। अतः
................................"
"क्या गाओगे?
क्या गाओगे?"
        "क्या खाओगे?
        क्या खाओगे?"
"भूख-भूख, भूख-भूख
भूख ही गायेंगे, भूख ही खायेंगे"
        "आत्मा की खुराक है भूख!
        इतिहास की खुराक है भूख!
        मुक्ति की खुराक है भूख!"
"हाँ जी, हाँ जी, बात ठीक कहते हो
पर शोर मत करो क्योंकि—"
        "करेंगे शोर, निश्चय करेंगे!
        भूख, भूख, भूख!
        शब्द की भूख, सरस्वती कैद है, मुक्त करो!
        स्पर्श की भूख, शोभा कैद है, मुक्त करो!
        अन्न की भूख; लक्ष्मी कैद है, मुक्त करो!
        करेंगे शोर निश्चय करेंगे!"
(धीरे-धीरे कोलाहल और क्रुद्ध स्वर डूब जाते हैं)
सुन लिया होली का फागुन का,
मँह मँह माधव मास का गान?
इस बार तर्ज कुछ और है! ढंग ही
दूसरा है! विकसित हो रहा क्रोध का,
रोष का नूतन रसशास्त्र;
    अतः मैं भी करूँगा शोर करूँगा!
        करूँगा, शोर करूँगा!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ग) आगमनी : जन्मयंत्रणा

सूत्रधार

शिशिर और सूरज के दारुण समर में
इन्द्र के भृत्यों ने विश्वास और सत्य की
हत्या की। फलतः बसन्त के अंग अंग
व्रण हैं, घाव हैं, जर्जर तन टूटा मन
वसन्त आज शय्याग्रस्त है। परन्तु यह
आश्चर्यभरी उसकी पाती आयी है,
जो डाल डाल, पत्र पत्र, फूल फूल
शब्द बन टँग गयी और मैं हूँ जो
इस लिपि को खूब पहचानता हूँ।
अतः सुनो शब्द सुनो :
"यह जो मैं दर्द से चिल्ला रहा
यह मेरी मृत्युयन्त्रणा नहीं, मित्र,
यह तो मैं जन्म ले रहा हूँ पुनः
"मेरे अन्दर है एक चिर नवीन
"मेरे अन्दर है एक चिर नवीन
द्विजन्मा बहुजन्मा तेजस्वी 'मैं'
जो लेता है जन्म पुनः पुनः
और हर बार काल और मन की अंध-
गर्भ गुहा से निकलते समय
अकथ पीड़ा पाता है
दर्द से छटपटाता है।"
"देख मेरी छाती में
दुश्मन की गोलियों के घाव,
देख कर मेरे माथे पर
दुश्मन की लाठियों के प्रहार
कहीं तुम्हें गलतफहमी न हो, मित्र,
कि मैं अब तब हूँ यम की प्रतीक्षा में।
यही तो रहस्य है दोस्त, ज्ञान गुह्य,
कि जो धीर हैं, बुद्ध हैं, युधिष्ठिर हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वे सदेह स्वर्ग जाते हैं; परन्तु मैं हूँ
कर्ण रश्मिरथी या पार्थ महारथी,
हमारे लिए नहीं इन्द्रयान आता है
मैं तो पुनः पुनः मृत्यु की भूमिका में
जन्म की यन्त्रणा भोगता हूँ।
अतः यह मेरी मृत्युयंत्रणा नहीं, मित्र।
लोग सीधे सादे हैं, समझते हैं कि
वह मर गया दुश्मन की गोली खा,
वह मर गया लाठियों की चोट से,
वह मर गया भूख से तड़प तड़प
सड़क पर, जुलूस में अथवा घर के
दरवाजे पर;— लावारिस लाश वह!
कुत्तों ने नोच नोच खाया उसे,
गृद्धों ने उत्सव के दीप जला
डटकर शवभोज का मज़ा लिया।
इन सारे महोत्सवों के बावजूद, मैं
कैसे समझाऊँ तुम्हें मित्र, कि यह
मैं जन्म ले रहा हूँ, यह है मेरा
दिव्य और विकराल अवतरण,
परम धीर तेजोमय अवतरण!"

(कवि का प्रवेश)

कवि

क्यों भाई, तोता भट्टजी, सूत्रधार,
क्या यह पढ़ते हो? कौन सा नाटक
आज खेलोगें? मैंने लिखा है एक
व्यायोग 'नूरजहाँ' खेलोगे इसे?
और कहाँ है तुम्हारी वह मैना वधू?

सूत्रधार

मैना को भेज दिया पीहर वहीं पर
खाली पेट चहका करे! रुपये में
छः छटाँक, अपना पेट ही पहाड़ है!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूसरे सवाल का जवाब पढ़ लो,
यह रही पाती सखा वसन्त की!

कवि

यह तो सादा कागज है केवल!
जिसका अर्थ है मौन या प्रश्न चिह्न।

सुत्रधार

मौन नहीं शोर! प्रश्न चिह्नों का शोर!
लगाओ अब अर्थ तुम; मैं तो चला!

कवि

अरे चल दिये? 'भरतवाक्य' अभी बाकी है!
अच्छा, तो मैं ही इसे कह दूँ!
ॐ क्रतो स्मर! ॐ कृत स्मर!!

"हिरण्यमयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।"

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३१. एक नगर नागफनियों का

इस कविता को लिखते समय टी. एस. इलियट का 'Waste Land' तथा मुक्तिबोध का 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', ये दोनों काव्यग्रन्थ मेरे मन में अपना प्रभाव विस्तार कर चुके थे। रूप और भंगिमा दोनों क्षेत्रों में इन कवियों का ऋण स्वीकार करता हूँ। परन्तु कविता के ढाँचे में अंकित स्थितियाँ और भाव अनुभावलब्ध हैं। इसका निष्कर्ष भी मेरा अपना है। १९६६ में लिखी गयी यह कविता 'ज्ञानोदय' के मार्च ६७ में एक वर्ष बाद प्रकाशित हुई थी।

मंगलाचरण

तो धरती तू भी झूठ बोलती है!
तुम्हारी, कोमल नरम नीलिमा
तुम्हारी, कोमल नरम हवा
तुम्हारा, कोमल नरम आकाश
तुम्हारे, कोमल नरम खेत
मेमने मृग शावक
श्वेत श्याम बछड़े
अरुण पीत पाखी
प्रात और सन्ध्या के गान
ओह, धरती तुम मोहक हो, माया हो, माता हो
पर आह, तू भी झूठ बोल गयी!
कितना बड़ा धोखा हुआ
कितनी बड़ी ट्रेजेडी हुई
जननी, तूने दुश्मन का साथ दिया
तूने जनम दिया
पर अपनी नहीं हुई!

"वत्स किसने कहा था तुम्हें
जननी और जनक विश्वसनीय होते हैं?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

युग है चिन्ता का, शंका का,
भय का, अविश्वास का।
किसने कहा था तुम्हें—
—जननी जनक विश्वसनीय होते हैं?"

फिर वह वाणी मौन हुई।
टका-सा जवाब मिला।
प्रसविनी वसुन्धरा मुझे नकार गयी!
पर मैं नहीं।
मैं तो भी स्वीकारता हूँ
धरित्री, तुम्हारे दिये हुए दान
क्षुधा और पिपासा
साहस और भाषा।
धरती, तुझे मैं स्वीकारता हूँ।

सर्ग १ : फाउस्ट और दुश्मन

(१)

कल इस नागफनियों के महानगर में
मिल गया दुश्मन— एक रेस्त्राँ में बैठा हुआ
'सिंगल' कप चाय मैं था पी रहा—
श्वेत धवल वेश और कोमल केश
ओठों पर हलकी मुसकान
लहजे में दिल्ली का जोर
लखनऊ का नाज और बम्बई की तान
सिगरेट का पैकेट बढ़ा, लीजिए!
('नहीं, धन्यवाद!') प्रश्न पर प्रश्न
वह पूछता रहा— और मेरे शीश पर
कालमेघ मँडराता रहा संशय और शंका का;
दूर कहीं पेड़ पर काक विश्वास हीन
भाषा बोलता रहा— "हाजिर हूँ मैं, सर!"
दुश्मन बोलता रहा— "कोई सेवा मेरे योग्य........"
मैं था मन्त्रमुग्ध उर्दू और हिन्दी की
मिली-जुली कल्चर का नमूना देख।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तब तक वह मार्क्स और नेहरू
रवीन्द्र और इक़बाल
ताज और अजन्ता
आदि की चर्चा करता रहा और बताता रहा—
'अवाम' की खुशी के लिए
इतिहास संशोधित हो,
दास्तानें गढ़ी जायें, भाषा गढ़ी जायँ
प्रगति के दस्तावेज की जबान 'इण्डियानी' हो
गान्धी-चिन्तन से आगे····" आदि-आदि

बातें बताता रहा
मैं भी जताता रहा
मैं कप पीता रहा चुपचाप
(इकन्नी की चाय कब तक चले?) दुश्मन भी
अन्त में हारकर कहा— "अच्छा मैं चला।
दर्शन होंगे फिर जनाब के कभी!"
जाती हुई एक झलक! नजर गयी पीठ पर
मैं काँप उठा— दुश्मन की गर्दन में
चमकती पीली कौड़ी-सी आँखें थीं····
और मुँह था पीठ की तरफ़···· मुँह नहीं फण!
मैं काँप उठा, जो मानवाकृति मुँह था
बोलता रहा घण्टे-भर; वह था काठ का
गढ़ा गया दूर देश-कुटिल दक्ष हाथों से।
ओह काठ की जबान भी,
कितनी भद्र होती है— सोचकर, काँप उठा।

(२)

"चलो उस पार केतकी वन में
जहाँ बरसात गन्ध से पागल है
जहाँ धरित्री छन्द से आकुल है
जहाँ आकाश मुफ्त कविता लुटा रहा
चलो, चलो, उस केतकी वन में
जहाँ नारियाँ निरावरण कटि में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मात्र पुष्पमेखला बाँधती हैं
जहाँ हम और तुम यही मात्र दो पुरुष
शेष सब नारियाँ, असंख्य पद्मिनी नारियाँ,
कर रहीं हमारी और तुम्हारी प्रतीक्षा।
चलोगे, कवि मित्र, केतकी वन में
रूप-रस-गन्ध के चोर और डाकू
तुम और हम,
चलोगे मित्र, चलोगे?''

दुश्मन 'सुआ' बन सुनाता रहा
कथा उस सिंहल के केतकी वन की।
चुपचाप सुनता रहा, दुबका खरगोश-सा
विशाल इस नगर के 'लॉन' के कोने में;
सामने खोल रखा था, पन्द्रह सौ वर्ष पूर्व
लिखा गया एक काव्य, एक श्लोक :
[''पुरा स दर्भाङ्कुरमात्रवृत्तिश्चरन्मृगैः
सार्धमृषिर्मघोना समाधिभीतेन
किलोपनीतः पञ्चाप्सरो यौवनकूटबन्धम।'']

''सोचते हो क्या यार कवि, छोड़ो न
चिन्ता 'अवाम' की 'कल्चर' की चलो चलें
उस केतकी वन में, चाँदी की धूप है,
स्वर्णगात नग्न देह नारियों के देश में!''
मैं 'रघुवंशम्' के पन्ने उलटता रहा
भीड़ अगल-बगल गुजरती रही।

['मुन्नी तू क्यों पीछे रह गयी'
'चावल का भाव तीन रुपये किलो'
'कहाँ भाई, कहाँ?'
'ओ डब्बू, मुन्नी को छेड़ो मत,
आ रानी बिटिया' 'कल उस मिल में
चार मजूर मारे गये— गोली चली....'
'कहाँ भाई, कहाँ?'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'हाँ, तो ठीक मेट्रो सिनेमा के सामने
तीसरे खम्भे के पास⋯हाँ⋯साढ़े छह
शाम को, टैक्सी-सड़क के उस पार⋯
मैं और तुम-मनु और सतरूपा—
पाँच गज के फ़ासले पर चलेंगे⋯ ठीक है!'
'कहाँ भाई, कहाँ?']

मैं समवेत स्वर सुनता रहा
रघुवंशम् उलटता रहा— गौरव की कथा है
दिलीप और रघु की, राम और सीता की—
दुश्मन 'केतकी वन, केतकी वन' रटता रहा
दूर कहीं एक सुर बेसुरा बजता रहा—
"बाङ्लार माटी, बाङ्लार जल,
पुण्य हउक! पुण्य हउक!"

(३)

आधी सिगरेट बुझा, पॉकेट में रख लिया
सोचता रहा—
आहार मन्त्री का भाषण अखबार में छपा है,
चूहे के 'विटामिन' की तारीफ़ की है,
आदत बदलनी है देश को, प्रगति करनी है।
यही सब सोचता था कि चौंक पड़ा
सुना एक स्वर को, देखा एक रूप को
"क्या सोचते हो, सदैव काव्य-मर्मज्ञ मित्र,
स्वप्नलीन, उर्वशी के सहचर बने⋯"

देखा तो दुश्मन खड़ा है, अपूर्व छवि
माथे पर सरपेंच रेशमी-अंशुकपट,
कामदार चोग़ा, मखमल और रेशम
स्वर्ण और रजत के तारों से मढ़ा हुआ
राजवेश अभिराम झल मल कर उठा

"चलो मित्र, तुम्हारे लिए लाया हूँ
हेलीकोप्टर यह 'इन्द्रमेघ', चलो चलो,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सागर के उस पार राजकन्या कुँआरी है
धरती उस देश की सूखी है
क्योंकि राजकन्या कुँआरी है
हरीतिमा उस देश की मर गयी
क्योंकि राजकन्या कुँआरी है
बच्चे जनमते नहीं, या जन्ममृत होते हैं,
क्योंकि राजकन्या कुँआरी है
चलो-चलो मित्र, तुम्हारी प्रतीक्षा है
प्रभु ने तुम्हारे ललाट पर राजतिलक खींचा है
तुम्हारे माथे पर छिपी हुई मणि है प्रभापूर्ण,
शीघ्र करो, जल्दी करो
राजकन्या कुँआरी है
धरती बन्ध्या है— नारी बाँझ है
हरीतिमा उदास है, जल्दी करो!
त्राहि माम्, कर रहे प्रतीक्षा तुम्हारी वे!''

दो क्षण रुका रहा फिर बोला वह—
मैं हूँ महीपति का अनुचर,
देखो यह राजमुहर
देखो यह पत्र और जल्दी करो
श!!!! बताना मत किसी से, रखो इसे
गुप्त, अति गुप्त; जनता बौखलायेगी,
लाभ क्या? चलो न, योगिनी अनुकूल है
उत्तम 'चर योग' है, चन्द्रमा सम्मुख है
इस शुभ लग्न में प्रयाण करो
दिशाओं को प्रणाम करो— चढ़ो 'इन्द्रमेघ' पर।
अन्यथा राजकन्या कुँआरी रह जायेगी
उठो, उठो, गौरव का वरण करो।''

—मैंने निहारा दुश्मन की ओर फिर एक बार
काँप उठा भय से, आँखें थीं गोल-गोल
पीत वर्ण कौड़ी के माफ़िक, दुश्मन ताड़ गया
बोला— ''ये आँखें सागर के पार से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गेहूँ के बोरों में भरकर आयी हैं
दिव्य-दृष्टि दाता हैं, चाहो तो एक जोड़े
तुम भी खरीद लो। खुलेआम मिलती हैं।
यही तो लोकतन्त्र के लाभ हैं।''
फिर रुक कर कहा— ''पर, चलो, उठो!
'प्राप्य वरान्निबोधत·····' सागर के उस पार
राजकन्या कुँआरी है। श्रेय का वरण करो।''

(४)

शाम को घास पर बैठा था— सामने
विजयदीप्त जगर-मगर क्लाइव का 'कलकटा'
उन्नत शीश हँसता था— पास में खड़ी थी
गान्धी की, उदास पत्थर की, नेत्रहीन प्रतिमा
—शिल्पकार राय चौधरी— बड़ी झंझट के बाद
कलकत्ते की छाती पर गड़ी थी कील-सी
ब्राह्मण-समाज में अछूत-सी, बे-जगह, बेशर्म,
ओह, धरती तू फट जाती नहीं? प्रतिमा
समाती नहीं?

'ॐ मणिपद्मे हुं!'' मैं सुन चौंक उठा
देखा तो बग़ल से दुश्मन गुज़र रहा
साथ में थे कोई सज्जन 'भद्रलोक'
दुश्मन आज था काषाय गैरिक वेश में
तनिक रुक मुझसे यों कहा— ''देखो इन्हें,
ये हैं कॉमरेड जमशेद गुहा— तंजुर और कंजुर[२] का
नया एडीशन निकाला है— सुन्दर लाल स्याही में
सजा-धजा चित्रमय। बहुत बड़े प्रकाशक हैं।
वाल्मीकि और व्यास भी शीघ्र ही·····''

फिर कहा— ''जरा हमें जल्दी है, जाते हैं हम
काली के मन्दिर में, रक्तवरण माता की जय हो!''
'ॐ मणिपद्मे हुं!'[३] दुश्मन चला गया।
'ॐ मणिपद्मे हुं' उठो, उठो कीर्ति को वरण करो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

"विश्व विजय नौजवान!
विश्व विजय नौजवान!"
उठता है स्वर नये आसाम से
"चल चल रे, मोशलमान
चल चल रे, मोशलमान!"
उठता है स्वर पुराने बंगाल से
"चीन है हमारा, अरब है हमारा
काश्मीर है हमारा, जहाँ है हमारा।"[४]
उठता है स्वर पुराने पंजाब से
"उठो उठो री, द्राविड सन्तान
आर्य हैं नीच, तुम हो महान्!"
उठता है स्वर नये मदरास से
ॐ मणिपद्मे हुं! ॐ मणिपद्मे हुं!

ऐसे में मित्र मैं क्यों पड़ा रहूँ!
मिथिला है जाग उठा
सिक्ख है जाग उठा
तब मैं ही क्यों पीछे रहूँ भोजपुरी सन्तान!
हिन्दी का अत्याचार अब बरदाश्त नहीं।
बाबा की मोटी लाठी उठाऊँगा
कलकत्ता प्रवास के गौरव का राजचिह्न—
मोटी-सी लाठी वह और बाबा के 'प्रभुओं'
का आशीर्वाद! दोनों हैं साथ-साथ!
हिन्दी मुर्दाबाद! भोजपुरी वीर सन्तान हम!
हम हैं महान्, 'ॐ मणिपद्मे हुं।'

लगता था मेरी हुंकार सुन भीरु यह
आकाश है काँप उठा, भयभीत यू. पी.,
त्रस्त है बिहार, हम हैं वीर सन्तान!
ऐसे में मुझे लगा बूढ़े ऋषि की
दयनीय प्रतिमा की, अन्धी आँखों से झर-झर
झर रहा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परम पवित्र कुछ— नीर है या रक्त है?
पता नहीं। 'फ़र्क़, क्या पड़ता है'। जो हो!
ॐ मणिपद्मे हुं!'

सर्ग २ : मरण-यज्ञ

"कोथाय जाबी रे, अनू? एमन साजे-गूजे....."
"मार्केट जाबो, माँ" "कार संगे?" "दादार संगे-
—तपन दा?" "आहा, तपन। ठीक आछे।
कोनो क्षति नेंई।" और यह तपन बोस
अभागा सर्वश्रेष्ठ, पॉकेट में नम्बरी नोट रख
भटका है नीली यमुना की खोज में
हजार-हजार रात-बाड़ी से बाड़ी, गली से गली
एक मरुतृषा लिये और बार-बार क़िस्मत ने
फल्गु के उदास तप्त बालू में ढकेल दिया—
फिर भी सोचता है नम्बरी नोटों के प्रवाह से
कभी तो धरती पिघलेगी!
नीली यमुना निकलेगी!
धरती का बोझ यह अभागा तपन बोस!

ट्राम लाइन के उस पार बैठे हैं
शकुन्तला-दुष्यन्त, मूँगफली छीलते हैं
हरी घास नोचते हैं, अर्थहीन बातें कुछ
कहते हैं, सन्ध्या उदास उतरती है
घर-घर दरबों में कबूतर बन्द होते हैं
वे करुणा से रोते हैं, रात उतरती है
सपनों की फ़ैक्टरी के कारीगर गुलाम
जँभाई ले उठते हैं, काम में जुटते हैं
सड़-सड़ सड़ाक्, कोड़ों की मार और
बढ़ती है हाथों की गति, हाथों का कौशल
खिलौने तैयार होते हैं! खरीद लो
खरीद लो, शकुन्तला, खरीद लो!
गुलामों के खुरदुरे हाथों ने
सिसकती आँखों से इनको गढ़ा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पीठ लहूलुहान! सड़सड़ सड़ाक्!
भोली शकुन्तला दर्द के खिलौने खरीद ले
सपनों के देश में गढ़े गये
जब तक दुष्यन्त नहीं लौटता है
अँधेरी टैक्सी को साथ लिये।

वृन्दावन जलता है
नीली यमुना में कंस ने तुम्हारी
हजार-हजार गायों को काट कर फेंका है
पानी मँहकता है, बदबू आती है
राधिका की चिता जलती है
मैं सस्वर पढ़ता हूँ गीत एक :
["स्मरगरलखण्डनम् मम शिरसि मण्डनम्
देहि पद पल्लवमुदारम्।"[५]]
किन्तु कृष्ण सिर्फ़ रोते हैं
यमुना विधवा है, वृन्दावन जलता है
कृष्ण सिर्फ़ रोते हैं!
समीरण धीरे बहो। राधा नहीं आयेगी।

"ओ री प्रिया तेरे शरीर को छूकर
धन्य यह पवन-रज मेरे अंग से लगी
अंग यह कंचन हुआ, जनम यह धन्य हुआ
मरण मैं जीत गया, जनम यह धन्य हुआ
पवन-रेणु मेरे अंग से लगी!"

—कल की स्मृति मुझे आती है
पर आज? आज तो मरणयज्ञ चलता है
उपस्थ ही काष्ठ है, योनि ही ज्वाला है
कामना आहुति है, सामगान उठता है
"ॐ कामदेवाय विद्महे
पुष्पबाणाय धीमहि
तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात्।"[६]
मरणयज्ञ चलता है,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शकुन्तला, यूप काष्ठ है
दुष्यन्त यज्ञपशु है— मरणयज्ञ चलता है।

तिरिया रे तिरिया, तेरे रुदन से
रोते हैं पाखी, रोते हैं पत्ते
रोता है भादर, रोता है सागर
तिरिया रे तिरिया, क्यों तू कातर है?
क्या गीतों को बेच अभी नहीं लौटा तेरा
बनजारा?
जननी री जननी, क्यों तू कातर है?
क्या तेरा भी लाल चुराकर ले गया मथुरा का
राजा?
बिटिया री बिटिया, तू क्यों रोती है?
क्या कहा? मेले में भटक गयी।
पिता ही खो गया?
कहाँ है प्रीतम? कहाँ है लाल?
कहाँ है पिता? कहीं नहीं, कहीं नहीं।
मरणयज्ञ चलता है।

सर्ग ३ : तब तीनों मुँहं बोल उठे!

रानी बिकाऊ है, राजा बिकाऊ है!
सच्चाई बिकाऊ है, प्यार बिकाऊ है!
हाँ, एकदम 'न्यूड' बिल्कुल नफ़ीस
ड्राइंग रूम सजा लो, सुरुचि कमा लो
राजा बिकाऊ है, रानी बिकाऊ है
लोगे मोल, लोगे मोल
लोगे मोल, लोगे मोल
'अजी मरघट पर जाओ चिल्लाओ!
डोम हैं हम? जो खरीदें इस कौड़ी के तीन
रानी और राजा को? हम हैं नागरिक।
काशी की बात न्यारी है। क़स्बे और
नगर की रुचि में भेद होता है।'
—भीड़ ने जवाब दिया। पर कोई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चिल्लाता रहा— 'लोगे मोल?'
अचानक तन मन थर्रा गया, मानो
खोंपड़ी पर ब्रज है कड़क उठा
दुबक गया आसमान, दुबक गयी भीड़
दिशाएँ शान्त हुईं और एक तीनमुखी
यक्ष का चेहरा दीख पड़ा और
मेघमन्द्र स्वर में क्रमशः मुँह बोल उठे।
चेहरे पहचाने लगे, स्वर पहचाना लगा।
(रवीन्द्र) : "अरे रे, अभागे रे, मैंने कब कहा—
—मैंने कब कहा कि
मानुष मत बन— बंगाली बन?
मैंने कब कहा कि
मानुष मत बन— बिहारी बन?
'आप नारे शुधू घेरिया, घेरिया'
मरते हो पल-पल, रे भाई भद्रलोक
तुम्हारे अहंकार से मेरी आत्मा में घाव है
ओह, मेरी पीड़ा का अन्त नहीं
ओह, मेरी पीड़ा का अन्त नहीं
'एकला चल' का यह अर्थ नहीं।"
(विवेकानन्द) : "अरे रे कायर, मैंने 'अभय' दिया
फिर भी तू भीरु रहा डरता रहा
अरे रे पामर, मैंने ब्रह्मास्त्र दिया
जिसे तूने ट्रांजिस्टर के वास्ते बेच दिया
प्रत्यंचाहीन धनुष लिये मूर्खवत्
धनुर्धर की कीर्ति ढोता रहा टट्टू-सा
इज्ज़त कमाता रहा लट्टू-सा
पर लक्ष्य बाण मारा नहीं
मौत को 'माँ' कह निर्भय पुकारा नहीं।
आज मेरी आत्मा में घाव हैं
तू मेरा क़फ़न बेच खाता रहा
मेरा 'अभय' व्यर्थ गया
मेरा ब्रह्मास्त्र खाली गया!"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(चैतन्य) : "ओह, तुझे शर्म नहीं आती है?
नदिया के कूल पर खेलते बनपाखी को
देखो और शर्म करो!
चोंच से चोंच, पंख से पंख, अंग से अंग!
—अह, देखो और शर्म करो!
रँभाती है धौरी, दौड़ता है बछड़ा उमंग से
देखो और शर्म करो!
प्रात और सन्ध्या में, तप्त दोपहर में
काली क्रुद्ध रात में, फूटते फूल–निर्द्वन्द्व
देखो और शर्म करो!
सब कुछ मरता है— कुछ भी टिकता नहीं।
सिर्फ़ वही बच जाता है
जिसे प्यार तुम करते हो
शेष काल लील जाता है
पचाता है, गोबर बनाता है!
पर जिसे तुम प्यार करते हो
वह छवि नहीं मरती है, वह क्षण नहीं मरता है
वह मुख नहीं मरता है,
वह परस नहीं मरता है।
बूँद में समुद्र है, क्षण में चिरन्तन है
प्रिया का ललाट ही प्रभु का ठिकाना है!
जिसे तुम प्यार करते हो
वही नहीं मरता है, मात्र वही नहीं मरता है
जिसे तुमने अमृत से सींचा है!

मरण–अग्नि जल रही— हा हा उठ रहा!
क़तार पर क़तार, पाँत पर पाँत
मन्त्र की डोर पर कर्षण हो रहा
मरण है खींच रहा, दुर्निवार पाश है
भस्म सब हो रहे, मरणयज्ञ चल रहा।
पर प्यार बच जाता है!
पवन प्यार को उड़ाता है,
आकाश क्षमा करता है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धरती व्यथा सहती है,
सृष्टि चलती रहती है
इस तरह प्यार बच जाता है।
अत: शर्म करो, शर्म करो
बाँबी में पड़े पड़े जहर सिर्फ़ पालते हो
यह काम नहीं आयेगा, मरण जब आयेगा
तुम्हारे माथे मणि है, मणि छीन ले जायेगा।
अत: प्यार करो, मणि का दान करो
समर्पण ही प्यार है, मुक्ति है, अमृत है।''

उपसंहार : शाप-मोचन

आकाशवाणी पर बजता है एक संवाद :
''सन्ध्या सुनहली है, हवा में धीरज है
दु:ख आज शान्त है, आसमान नि:रज है
वधू, कुछ कथा कहो
वधू, कुछ बात करो
समय के मेघ उमड़े हैं, छन-छन बरसते हैं
पर,
असुर रोस पी जाता है, जीवन पछताता है
असुर के खप्पर से फिसल पड़ा
एक बूँद 'समय', मैं चुरा लाया हूँ
वधू, इस क्षण को वरण करो
वधू, इस क्षण को अमर करो
वधू, अभिसार करो
सोना पिघल गया पश्चिम का
नीली बाढ़ में दिशाएँ डूब गयीं
देखो, न क्षण कहीं रिक्तहस्त लौट जाय!
वधू, अभिसार करो!''
[''मन्दिर बाहर कठिन कपाट
चलइत पंकिल शंकिल बाट
हे सखि काह, करब अभिसार—
हरि रहु मानस सुरधुनि पार!१]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मैं द्वार तोड़ता हूँ— मैं कपाट खोलता हूँ
मानस की सुरधुनी बहती है
ओ राजा की बिटिया,
हर्ज नहीं यदि डूब जाओगी
भोर हुए, नीलोत्पल बन जाओगी।
यह देह वल्लरी मृणाल बन जायेगी
यह छवि नीलोत्पल बन जायेगी।
ओ राजा की बिटिया, मन के दर्पण में
मानस की सुरधुनी बहती है
यदि पार कर जाओगी
तो पहचान पाओगी उस पार
प्रीतम खड़ा है, योगी का वेश धर!
द्वापर लौट आयेगा।
वधू, अभिसार करो।''
आकाशवाणी गोहाटी है। बज रहा
संवाद मणिपुरी भाषा में। चित्रा
सुनती है, अर्जुन कहता है।
अचानक सुई घूम गयी; द्वापर–सुर भंग हुआ।
''पूरब, पछाँह–देस, उत्तर से दक्खिन लौं''
नये स्वर घूमने लगे, आसमान मथने लगे
रतन निकलने लगे, मोह छिन्न–भिन्न हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संदर्भ संकेत

१. पुरा स दर्भाङ्कुरमात्रवृत्ति…" (रघुवंशम्, १३वाँ सर्ग)

२. 'तंजुर' और 'कंजुर'— तिब्बती बौद्ध शास्त्र के दो अंग।

३. "ॐ मणिपद्मे हुं"— नेफा (उर्वशीयम्) और लद्दाख तथा हिमालय के अन्य बौद्ध अंचलों का अत्यन्त लोकप्रिय मन्त्र।

४. "विश्व विजय नौजवान"— असम का लोकप्रिय राष्ट्रीय गीत। "चल-चल रे मोशलमान" नज़रुल का एक गान जिसका दुरुपयोग नोआखाली और पूर्वी बंगाल के दंगों में खूब हुआ। काज़ी नज़रुल इस्लाम की दृष्टि साम्प्रदायिकता से बिलकुल मुक्त है। पर उनके कुछ गीतों का दुरुपयोग हुआ है। "चीन है हमारा…" इकबाल के एक सम्प्रदायवादी गान की पैरोडी है।

५. "स्मरगरलखण्डनम्, मम शिरसि मण्डनम् देहि पद पल्लवमुदारम्"— गीत गोविन्द की प्रसिद्ध पंक्ति।

६. ॐ कामदेवाय विद्महे, पुष्पबाणाय धीमहि तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात्" तान्त्रिकों की कामगायत्री।

७. "मन्दिर बाहर कठिन कपाट" इत्यादि— यह ब्रज बोली के बंगाली वैष्णव कवि गोविन्ददास का पद है। कुछ लोगों को संशय है कि ये मैथिली हैं।

प्यार नहीं मरता है कभी भी
अत: गीत का वरण करो
सूरज नहीं मरता है कभी भी
अत: माटी का वरण करो
ईश्वर नहीं मरता है कभी भी
अत: मानुष का वरण करो।
क्योंकि तुम हो गीत
तुम हो माटी
तुम हो मानुष
यही है तुम्हारी मुक्ति, यही है तुम्हारा चरम ठिकाना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३२. मोह-मुद्गर[१]

साँझ : आग्रह

निर्जन सुनसान एक गाँव
कटे-कटे खेत पीत-मृत घास
उदास एक नदी उदास एक गाँव
दूर पर लड़ते हैं कुत्तों के झुण्ड
उड़ते आकाश में शवभक्षी काक

पर लाख सड़ी बदबू के बावजूद
इस पगले मन को क्या हो जाता है
उठता है करने को अभिसार
और तब, आश्चर्य, चारों ओर
उदासी का वल्कल फोड़कर
फूटता है छवि का प्रसार उदार
साथ ही हल्की वकुल की गंध

हवा में चतुर्दिक तैर जाती है।
गोकि तब भी
निरन्तर मँडराता है शीश पर
शवलोभी
शवभक्षी
एक क्रुद्ध काक पंख को पसार।

साँझ : व्यथा-बीज

आज हवा मस्त है—
पीली धानकटी क्यारियाँ

---

१. सृष्टि में नौ रसों का एक मोह-मुद्गर है, जिससे काल-पुरुष सभी को निरन्तर पीट रहा है। यह कविता विविध खण्डों में एक ही रात में लिखी गयी है— एक रात के भीतर मोह-भोग से मोह-मुक्ति तक की मानसिक यात्रा के रूप में।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और मन में तुम्हारी ही नरम उँगलियाँ
बुन रही, रंगीन रेशमी धारियाँ!
आज हवा मस्त है।
नहीं तो, फिर बाहर क्या है?
पीले बदरंग खेत—पुराना पीपल
लटकते घोंसले—चीखते गृद्ध-शिशु
खउराया बूढ़ा श्वान एक़, गर्दन मरोड़
देह खुजला रहा, दांत दिखा रहा
बस यही? कौन गर्व? कौन हर्ष?

सारा वातावरण पस्त है
पर मन में तुम्हारी नरम उंगलियाँ
वेध वेध सुई काढ़ रहीं
रंगीन रेशमी धारियाँ
यही कारण है कि
अकारण ही यह हवा चंचल है
चौदह बरस की फ्रॉककसी
हासदीप्त, डबडब तरल नेत्र,
अभी-हाथ-छुड़ा-भगी बालिका—
हवा चंचल है, मस्त है।

रात्रि : प्रथम पाश

गीत एक टूटता है चोट खा
गीत एक मरता है दमतोड़
दूर कहीं दूर-उदास एक गाँव में
पर रंग नजदीक कहीं सजते हैं
किसी की मयूरकण्ठी लहराती है
किसी की बनारसी के पल्लू पर
अरुप अंधकार में रुप-रंग उगते हैं
और बहुरूपी यक्ष एक मैं
सारी लीला देख-देख चिन्तित होता हूँ
क्यों चोट भीतर लगती है
पर रंग चेहरे पर उठ आते हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साथ ही तुमने कभी कुछ कहा,
क्यों याद आ जाता है?
और तब पूरब से पश्चिम तक सर्वत्र
क्यों मृग शावक दौड़ने लगते हैं?
बहुरूपी मन का यक्ष मैं
देख देख चिन्ता करता हूँ।

अर्धरात्रि : चरम पाश

इस रात की जड़ें मेरे अन्दर समा गयी हैं
मेरी कठोर आत्मा की दीवार को फोड़ती हुई
घाव और दरारें बनाती हुईं
जिन पर मैं मोह के चिरकुट बाँध रहा
कामना की राख पर पानी दे
घावों पर मोह के चीथड़े निरन्तर बांध रहा
मेरी बांहों की, हृदय की,
मस्तक की, टांगों की,
अंग-अंग की
शिराओं में धमनियों में
भीतर ही भीतर फैलती लता की तरह
आलिङ्गन बद्ध देह की तरह

यह रात बढ़ती-उगती-फैलती जाती है
शाखा-प्रशाखा फेंकती
गाँठ पर गाँठ बाँधती
देह मन सर्वत्र फैल रही
यह रात भीतर और भीतर
आत्मा के अतल में—गहरे और गहरे
जड़ों का जाल फेंकती प्रतिक्षण
बढ़ती ही जाती है।
ओह, क···· निश्चय-निश्चय
किसी किरण से एक चाकू उधार लाऊँगा
और इसकी प्यारी खूबसूरत गर्दन
काट फेंकूँगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दिवस-प्रसव

आज से हजार वर्ष पहले,
क्रोध की मैंने बहायी एक नदी,
मोह का मैंने बसाया गाँव
मन को पीट पीट पक्की बनायी सड़क एक
और किनारे लगाया पीपल का एक पेड़।
पीपल का वह एक पेड़
जिस पर बैठा है आज एक प्रेत
असभ्य कुरूप कुत्सित कदर्य—
एक प्रेत
जो करता है छेड़छाड़ अश्लील
उधर से जब कभी नम्रपद धीर मंद
गुजरती हवा-वधू
मर्मस्पर्शी, कल्पना, निरञ्जना
अनुपमा मेरी वधू हवा!
"बदमाश प्रेत, ठहर! तेरी इतनी हिम्मत!"
पर मेरा ही लगाया हजार वर्ष पूर्व का
अथर्वपुरुष पीपल छठाकर हँस पड़ा
और मैंने— शीश उठा
देखा, पहचाना, चकित हुआ

कि वह प्रेतमुख और कोई नहीं
मेरा है— हुबहू मेरा है!

तो, ये हैं विधि के दो आशीर्वाद!
हवा वधू मेरी है
प्रेतमुख मेरा है
क्योंकि मैंने ही एक दिन
बहायी एक नदी, बसाया एक गाँव!

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३३. महावल्लीपुरम् : समुद्र-कथ

[**वक्तव्य :** समुद्र इन कविताओं का विषय नहीं 'पृष्ठभूमि' मात्र है। विषय है 'मैं' इस 'मैं' में। 'समूह' भी स्थित है। इस कविता में 'मूड' की एकता नहीं, पर अविच्छिन्नता है। यों ही कविता बहुत कम लिखता हूँ। जो लिखता हूँ प्राय: फाड़ दिया करता हूँ। जानता हूँ कि मेरा मैदान गद्य है। मैंने गद्य की गदा हाथ में लेकर अवतार लिया है। पर कभी-कभी काव्य-वन में वैसे ही प्रवेश करता हूँ जैसे यक्षराज के 'सौगन्धिक-वन' में भीमसेन। यक्षों और किम्पुरुषों के कड़े पहरे के बावजूद क्रोध, शोक और करुणा के कमल चुन लाया हूँ। ये कवितायें १९६५ में मामल्लपुरम्, (महावल्लीपुरम्) के समुद्र के सान्निध्य में लिखी गयी हैं।]

प्रभात

लहरों के उत्ताल घोड़े
गरजते उछलते कूदते प्रबल वेग
गर्दन उठाये, अयाल बिखराये
हरित वर्ण इन्द्रनील घोड़े
श्याम कर्ण घोड़े।
एक पर एक
पाँत पर पाँत
फ़ौज पर फ़ौज
लेते हैं टक्कर— तोड़ते हैं व्यूह
घटा बाँध चढ़ती आ रही
दिग्विजयी चंगेज़ की
अंतकवाहिनी।
प्रवाह कौन थामेगा?
कौन रोक सकता है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस महामत्त क्रूर
पीत धूसर असुरों की अंतकवाहिनी
को?
एक उत्तर— शान्त और संयत,
'हमारी यह मौन कठोर
क्षमाशील धरती,
मनुजगर्भा वसुन्धरा।'

संध्या

हवाओं के क़ोड़े
पीटते हैं वरुण के सवार
बढ़ते हैं लहरों के घोड़े
पागल चिल्लाते हैं
सिर पटक जाते हैं
खाकर हवाओं के कोड़े।
ये हस्तिकाय लहरें
नीग्रो गुलामों सी शक्तिमान
बल और पौरुष मूर्तिमान
फिर भी चिल्लाती हैं मार खा
पीटते बरुण के सवार
इनके माथे हवाओं के—
चुभते अङ्कुश
मुक्ता-गर्भ-शीश पर।
एक दिन—
वह होगा, जो कभी नहीं हुआ,
जब कालपुरुष फेंकेगा चैलेञ्ज
तब यह युगों से क्षुब्ध और क्रुद्ध
पीटी गयी पददलित
हस्तिकाय लहरों की सेना
आकाश के देवलोक को
गटागट लील जायँगी।
प्रतीक्षा करो— उस कल्पान्त की,
एक दिन वह पवित्र आह्वान आयेगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चाँदनी रात

समुद्र एक नायिका है
मुग्धा प्रगल्भा नायिका है
रात भर कामना की उद्याम लहरों में
तन और मन को निचोड़ती है
दोपहर को
रतिश्रान्त मौन पस्त पड़ी रहती है
संध्या के आगमन पर
फिर वह क्लियोपात्रा बनती है
जिसका तन और मन थकता नहीं
जिसका सौन्दर्य घिसता नहीं
जिसका सौन्दर्य चिरस्थायी है
पर उससे भी चिरस्थायी है उसका विष
जिसे मथ कर कोई भी निकाल सकता है
अमृत और लक्ष्मी
सुरा और उर्वशी
रम्भा और रतन
प्रतिगामी उच्चैश्रवा
अग्रगामी ऐरावत
ये सारे सहज जीवन के शत्रु
ये सारे विष के वंशज
जिन्हें पान करना, भोगना
सजना और सजाना
और जिनके दंश में मत्त रहना
यही है मनुज की चरम उपलब्धि
यही है मनुज की मुक्ति,
इसी में वह पाता है
अपने ईश्वर का पता और ठिकाना।
समुद्र एक नायिका है
विषधात्री, विषकन्या नायिका।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शान्त दोपहर : दूसरे दिन

आसमान में
तेज-तप्त यक्ष ने
रोशनी की हस्तिकान्त वीणा बजायी
मध्याह्न के रथ पर सवार हो।
कैसा सम्मोहन है!
ये गरजते चिघ्घाड़ते हाथी
भयंकर, विशालकाय, बीस हज़ार हाथी
सम्राट चण्डाशोक की उन्मत्त रणवाहिनी,
क्षितिज से दौड़ते शुण्ड उठा
वेग से आते थे अभी-अभी
और मेरी क्षमाशील धरा के
कलिंग-व्यूह से टकराते थे।
अचानक, यह वरुण की गजघटा
नील आसमान के अमित आभा
यक्ष की
हस्तिकान्त वीणा सुन
शान्त हो अचानक सो गयी।
क्या सम्मोहन है!
(तुम कहते हो दुपहर को
सागर कुछ शान्त हो ही जाता है।)
पर अब भी एक ऐरावत है,
कृष्णकाय पट्ठा ऐरावत है,
जो क्षुब्ध और जाग्रत है
मन की गुफा में निरन्तर गरजता है
कोमल हस्तिकान्त न सही!
है कोई निर्मम जृम्भकास्त्र
जो उसको सुला दे?

आत्मा के घाव : विदा

(क)

सागर, हम पराजित पीढ़ी के बेटे हैं
हमें रोष नहीं आता है
क्रोध नहीं आता है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हमें लाज है, न शर्म है
हम हैं डुण्डुभ दार्शनिक
गलित कीच खाते हैं
स्थितिप्रज्ञ कहाते हैं
और जब आवाहन आता है
तुम्हारी ही गरजता हुआ
रोब के, क्रोध के कोड़े पटकता हुआ
तो हम टाँगों में पूँछ चुरा
कूर्म–वृत्ति–महिमा गाते हैं
दर्शनकोपीन में मुँह छिपा
स्वयं अपनी नग्नता देखने से बच जाते हैं
सागर,
हम पतित पराजित पीढ़ी के बेटे हैं।

(ख)

सागर, तुम रत्नाकर हो
और हम हैं कौड़ी–कंजूस
एक एक कौड़ी पर एक एक जनम हारते गये
परसों, मेरे पितामह ने पिता को
दो कौड़ी में दुश्मन के हाथ बेचा था
कल, पिता ने मुझको एक कौड़ी में बेच दिया।
और आज—
ऐसी तेजी से आदमी का भाव गिर रहा है
कि
मुझे भय है, मेरी सन्तान का दाम हो
सिर्फ कौड़ी का दाँत एक।
('वत्स, करोगे क्या? युग ही ऐसा है
आदमी कौड़ी का तीन हो गया!')
गो कि तुम रत्नाकर हो
गरज गरज सिंह ध्वनि से
बार–बार अपने अतल गर्भ के
रत्नों को लूटने की प्रेरणा देते हो
पर हम पौरुषहीन, कौड़ी के तुच्छ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हम केवल ग़ुलाम, साहस नहीं रखते।
वंध्या रति
मोह मूढ़ तप
मायामृग–महिमा
इन सबके मयूर–पंख बाँधकर पूँछ में
आदमी अपना मूल्य घटाता जाता है
दिल को तंग बनाता जाता है।
मूल्य–विस्तार के लिए
दिल–विस्तार की शर्त है
दिल की मुक्तावस्था में ही
गन्दे जल पंक से
जीवन की विकृति से
छवि के रंग फूटते हैं
शोभा का बसन्त उतरता है।
क्षमा करो मित्र,
तुम निस्सीम मुक्त सागर हो
पर मेरा दिल कूप
तुम जैसा निस्सीम और मुक्त
सागरोपम नहीं बन पाता है
क्यों कि मैं हूँ
कौड़ी पर बिका हुआ एक अपदार्थ।

भरत वाक्य : लौह वृक्ष

मैंने देखा
ग़ाजीपुर में एक सड़क पर
जो टारी से ज़मानियाँ जाती है
लोहे का एक पेड़
एक कठोर मन–पेड़
उस पर है बर्रे का एक छत्ता
जो भभक भभक जलता है आधी रात
पर रहता है दिन भर मरा मरा शान्त
पछुआ पवन के वैरागी झकोरे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लू का क्रोध— अकारण प्रहार
और प्रेतग्रस्त आछी के फूलों की—
गँध का तीव्र व्यंग
सब कुछ बरदाश्त कर लेता है, और
रहता है दिन भर शान्त— मरा मरा।
यह करता है प्रतीक्षा उस प्रात की
जब हमारे बच्चे इसे खेल खेल में
खोद कर उकसायेंगे
और तब
रक्त पीतवर्रों की अग्निवाहिनी
टोली बाँध
समस्त क्रोध के साथ टूट पड़ेगी
नीचे की जमीन पर लू भरी वायु पर
गरबीली गंध पर
जो सनातन से प्रेत-ग्रस्त है
और क्षण भर में समाँ बदल जायगा
बदल जायँगे हमारे चेहरे
और साथ ही बदल जायगा
इस लोहे के पेड़ का कठोर सख्त चेहरा
वाल्मीकि का पाप-मोचन हो जायगा
और इसी सूखी लौह शाखा से जनमेंगे
कोमल नरम टूसे, जिनसे
हमारे, तुम्हारे, और उसके, और उसके
बच्चे मिलजुल खेलेंगे।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३४. पत्र उत्तराफाल्गुनी के नाम

"मैं उन पर्वत की नील श्रेणियों से नीचे उतरकर
जिसमें किन्नरकण्ठ देवदारु पढ़ते हैं कोई
दिव्य-गाथा,
जिसमें एकान्त में जलधारायें और शिलाखण्ड
करते हैं परस्पर प्यार
और आदिम वंशरी सम्मोहन के सुरों का
जाल बुनती है
जहाँ है निर्मलता और अभय
आदिम साहस और गरिमा,
भरोसा, आश्वासन और शान्ति।

मैं उन नील श्रेणियों से उतर आया बहुत नीचे
गलत लोगों के बीच, गलत गाँव में
ग़लत नदी के किनारे,
जहाँ रोटी बड़ी मँहगी, दुर्लभ है स्वादिष्ट जल
जहाँ न कोई पक्षी न कोई गान।
कुछ नहीं : सहज सुन्दर और स्वस्थ्य कुछ भी नहीं।

मैं उतर आया बहुत नीचे एक अत्यन्त ग़लत देश में
जहाँ रात में चलते हैं लोग लेकर
धारदार गुप्ती हाथ में, वृक्षमूलों पर
दिन दुपहर रगड़ते हैं तीक्ष्णदंत काले वाराह,
रात्रि में बोलते उलूक मंत्र अभिचार के,
जहाँ सरस्वती है कैद और श्रद्धा है बन्धक!

मैं उतर आया बहुत ग़लत लोगों के बीच, गलत नदी के किनारे
जहाँ न मुक्त खुला आकाश, न धूप,
न तारा-पाँत, न ऋतुओं की हवाओं में
कोई संवाद, कहीं कुछ नहीं,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सब कुछ विरूप्, किंकर्त्तव्यविमूढ़ता और जड़िमाग्रस्त,
त्रस्त!
मैं उतर आया नीचे, बहुत नीचे, एक ग़लत देश में
एक ग़लत गाँव में, एक ग़लत नदी के किनारे!
जहाँ न कोई गान! न कोई पंछी, न कोई लड़की,
न ताजी धूप, न गरम रोटी और न स्वादिष्ट जल।
जहाँ है उमस दिन रात, पसीने की बदबू
जहाँ रति नहीं, उपरति है, उबकाई है
जहाँ आत्मा का पवित्र कमल कीचड़ से शीश उठा नहीं
पाता है।

जहाँ है घर-घर के कपाट बन्द
न कोई दस्तक, न कोई आहट, न कोई सांस,
न स्नान-यात्रा, न प्रीतिभोज की पांत।
जहाँ शब्द खिलते नहीं फूल की तरह
जहाँ शब्द बन नहीं पाते रोशनी की तेज किरण,
या कोमल दृष्टिपात।
जहाँ अन्तर की करुणा आँखों में आकर
विवश ठोस पत्थर बन जाती है
बन जाती है एक चितवन अपरिचित क्रूर।

परन्तु ऐसे में भी तुम उतरो एक बार, मेरी शिखर वासिनी प्रिया
मेरी प्रिय 'असमिया' छोकरी!
तुम उतरो बनकर एक पुलक, एक आलोक
तुम उतरो बनकर, एक स्वाद, एक मधु, एक गान
बनकर उतरो बनपाँखी, पुरोहितों का कण्ठ-स्वर
निर्मल प्रसन्न प्रात और आशीर्वाद!
जिससे मुहूर्त बन जाये सूर्य
सूर्य बन जाय शब्द, शब्द बन जाय जीवन
टहनियों से उगती पत्तियां फूल और फल
पकहर होती हुई फसल, मधुमय दानें,
प्रसन्न स्वादिष्ट जल की धार और—
और घर-घर के कपाट खोलती सार्थक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सहज स्वस्थ्य भाषा, अपनी निजी भाषा।
ओ मेरी अनुत्तरा उत्तराफाल्गुनी,
तुम बनकर उतरो एक उज्ज्वल उद्धार।
और मैं एक अकिंचन महामूर्ख कालीदास
मैं एक 'बाभन' का छोकरा,
लिखूँगा तुम्हारी रूपगाथा के
श्लोक, छन्द और गान।''

[लेखक की पुस्तक 'मराल' से]

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३५. नदी और मैं : एक प्रेम-कथा

[नदी प्रतीक है त्रिकालव्यापी व्यक्ति चैतन्य के प्रवाह की। इसी व्यक्ति चैतन्य के भीतर लोकचैतन्य (कलेक्टिव कांशसनेस) भी प्रतिष्ठित है, ठीक वैसे ही जैसे व्यक्तिदेह के भीतर कूटस्थ अचल विश्वसत्ता प्रकाशित है। अत: जो मेरी नदी है वह सर्वव्यापिनी भी है। और मेरा भोग, मेरा आस्वादन, वास्तव में एक प्रीतिभोज है, सारे समूह के भोग और आस्वादन से जुड़ा हुआ। यदि उस बाहर की नदी के साथ भीतर की नदी का जो वस्तुत: एक चैतन्य प्रवाह के दो रूप हैं योग-संयोग निबिड़तर और अधिक अनुभव-संवेद्य हो उठे तो मेरा सम्पूर्ण जीवन ही सारी सृष्टि के लिए एक प्रीतिभोज बन जायगा। पर ऐसा होना बड़ा कठिन है। यह असाध्य साधना है। यही तो बुद्धत्व है। इसी को निर्वाण कहते हैं। (कु.ना.रा.)]

प्रस्तावना

मैं उस अनामा नदी के तट पर
बार बार जाऊँगा
जहाँ जरठ काले महीरुहों की छाँह में
तह पर तह शीतल शान्ति है, सुरक्षा है
जहाँ चलती है मन्द-मन्द, पके जामुन की
ग़न्ध से लदी मीठी काषाय हवा
जहाँ नदी के प्रवाह की अविराम कटि भंगिमा है
जहाँ अनवरत प्रवाहमान संकोचहीन प्रतीक्षा है
जहाँ यहाँ से वहाँ तक सर्वत्र व्याप्त है
एक अविभाजित अभुक्त काषाय क्षण का स्वाद
(मेरी प्रतीक्षा में, केवल मेरी प्रतीक्षा में!)
उसी अनामा नदी के तट पर
आज
कल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सदैव, बारबार जाऊँगा।
जहाँ घनी झमार पत्र-राशि के बीच
सरस परिपक्व गूदेदार गुच्छ के गुच्छ
लटके हैं रूप के रस के गन्ध के,
जहाँ मन चाभता है सद्य ताजे स्वादिष्ट प्राण,
जहाँ दूर अति दूर कोई दुर्विनीत शब्द
सघन वन ग़र्भ में टूटती शाखा सा चटखता है
फिर उधर ही कहीं, किसी गहरे गम्भीर में, डूबता-डूबता
उसी ओर कहीं अतल लीन हो जाता है
जहाँ कोई लीला हिल्लोलित शोख क्षण
क्रीड़ावश या लोभवश तट से आ टकराता है
और,
नरम ऊँगलियों से कठोर कगार का दृढ़ मन टटोल जाता है
फिर, प्रवाह समर्पित हो विनीत बह जाता है
एक बार भी घूमकर देखता नहीं
चला ही जाता है विनीत और नतशीश
किसी सजल, अनन्त और व्यापक हृदय के पास।
मैं इन शोख दुर्विनीत क्षणों क़ी विनीत इच्छाओं का
खेल देखने आज, कल
सदैव और बार-बार
उस अनामा नदी के तट पर जाऊँगा।

दृष्टि अभिसार

वह दिवस अद्भुद रहा, वह धूलिधूसर सांझ।
दिन भर बेंत वन के मध्य, क्षीण कटि,
वैतसी तनु-भार, चन्दन-खौरी
साजती, अनिमेष लोचन ताकती
कोमल नरम वपु श्यामली,
एक वह कोई नदी।
और, मैं मानस-मुकुल को भूनता
सृष्टि को निष्कर्म सिद्धि बाँटता
काष्ठमौनी सिद्धियों का पीता रहा काषाय।
(कटु काषाय पर ही स्वाद जल का मिष्ट होता है!)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर वह दिवस अद्भुद रहा, वह धूलिधूसर सांझ।
हृदय में, कण्ठ में, देह में, मन में
सर्वभक्षी तृषा ले जब एक संध्या
बेंतवन के मध्य क्षीण कटि चंचल
वैतसी तनुभार, सांध्य चन्दन खौरि
आंकती, अनिसेष लोचन ताकती
एक वह कोई नदी तनुश्यामली।
मैंने उसे देखा,
मैंने नदी की दृष्टि को देखा,
क्षण दृष्टि वह, पर बन गयी अभिसार
पीने लगी मेरे सहज अस्तित्व को
नदी की अम्बुश्यामल दृष्टि वह!
मुझको लगा, तब, यह नदी है
प्रेयसी का भाल, अथवा दिशा-निर्देश
प्रभु की तर्जनी का, लक्ष्य है यह,
चरम परिणति है हमारी, मुक्ति है—गति है।
नयन पल्लव मुँद गये मेरे विकल विह्वल।
तो यह नदी देगी मुझे
अविराम गति की वेदना
औ' मुक्ति का सुख स्वाद!
नयन पल्लव मुँद गये मेरे
नि:शब्द मैंने प्रार्थना की—
ओ नदी, तू जाग; तू प्रवाहित हो
कण्ठ में, मन में, देह में सर्वत्र
अनवरत, कर मुझे तू पान, छककर,
जिससे पा सकूँ मैं
अविराम गति की वेदना औ' मुक्ति का सुख स्वाद

राग

मुझ पर गुजर जाती है प्रति आधी रात
एक कोई सर्वभक्षी नदी
अनजाने आदिम जल की अकूल
सर्वभक्षी नदी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेरी शय्या के अगल बगल असंख्य
गुलाब और केतकी के दुर्गम झोंप,
असंख्य मणि सर्पों के निवास,
अनेक-अनेक पुतुल खेल, कोमल,
कूलद्रुम दृढ़ और बेपरवाह; सबको
सब कुछ को डुबाती यह सर्वग्रासी नदी
पता नहीं
आती कहाँ से और कहाँ चली जाती है।
प्रति आधीरात!
आदिम जल की सर्वभक्षी नदी!
पर ज्यों ही सुबह होती है
भास्वर वारिधार, नदी एक ज्योतिःसरा
अवतरण करती है मुझपर, नदी पवित्र पापहरा।
तब न शय्या है, न शवाधार, न संशय।
यह दृश्यावली और है, यह दर्पण अन्य है,
स्पष्ट चेहरे हैं, विराग और राग,
फिर-फिर नजरों के इशारे इत्यादि इत्यादि,
प्रेम पत्र, डांट-फटकार, ताजे समाचार
सरल आकृतियाँ, मनीआर्डर-तार
हम और यह सम्पूर्ण दृश्यावली हमारी
मलमल नदी स्नान करते हैं, प्रति प्रात
प्रसन्न मन, देहतल पोंछ पोंछ, फिर-फिर स्नान करते हैं।
प्रति सुबह नित्य जब यह उतरती है
भास्वर वारिधार, नदी पापहरा!
रात भर हा हा-रव शववाही धारा प्रवाहमान;
पर सुबह-सुबह, सब कुछ निर्मल है
झिर झिर ज्योतिर्मय, भास्वर प्रसन्न जल।
हे नदी, हे तामसी शववाही, हे भास्वर वारिधार!
तुझे शत शत नमन, तुझे बहुत बहुत प्यार।

समागम

नदी यह जानी पहचानी
अन्तर्वाहिनी, आपाद मस्तक बह रही ऐसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानो अंगांग लिपटी हो प्रेमिका की देह।
परस्पर थर थराते हृदय दो
रक्त की वह तीव्र वेग पछाड़
आपाद मस्तक बह रही उन्माद विद्युतधार
सुखद है यह मिथुन पीड़ा, मोहवंशी
बज रही, सुख-सर्वस्व है रतिसार
मन लिप्त-मूर्छित, रुद्ध हैं सब शेष रव,
रुक गये दिक् काल, शेष सृष्टि असार,
लौचन-स्नायुओं के मूल से उठते हुए
ब्रह्मरंध्र कपाल तक, चेतना के
सुखद दंशन, 'शॉक' और प्रवाह।
सुख-सर्वस्व है, यह रति-क्रिया, एकान्त
अह, चक्षु मेरे मुँद गये सुख स्नात।
कुछ क्षण बाद
आँखें खोलता हूँ, देखता हूँ
सुन्दर धरामुख, सृष्टि सुन्दर
सुन्दर यामिनी, तारिका-शृंगार,
सुन्दर गृहों के बन्द द्वार गवाक्ष
सुन्दर चाँदनी की रात निर्जन
धरती, कुसुमिता-वनकानना
सभी सुन्दर-विशुद्ध-पवित्र।
मुझ परम दरिद्र को यह महा अनुभव दान
कर गयी जो नदी
आपाद मस्तक बह रही है जो नदी
वह नदी मेरी यार, मेरी प्रेमिका है।
नदी, तेरे भाल पर चुम्बन, तुझको बहुत सा प्यार।

महाभाव

यह नदी अन्तर्वासिनी आपाद मस्तक बह रही।
कर रही मेरा निरन्तर पान,
पी रही मुझको निरन्तर यह नदी!
वाम-दक्षिण बाहु-पग़, नयन युग के मध्य
गुल्फ त्रिकुटी बीच, स्नायु मण्डल-मध्य
सींचती, शिश्न-नाभि-ललाट

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर रही मुझको निरन्तर तृप्त,
कर रही मेरा निरन्तर पान।
आह, यह कैसी तृषा मेरी और उसकी भूख
देह भीतर, प्राण मन के मध्य
गुरु ने, पिता ने, प्रेमिकाओं ने
जो लगाये थे सघन कान्तार
अथवा पुष्पवन
सर्प संकुल केतकी वन
या कुसुम-संकुल झाड़-विहार-वीथी कुंज
नदी इन सबके मध्य अन्तर्धान
निरन्तर बह रही है, कर रही है तृप्त!
उनको कराती पान, उनका कर रही है पान!
यह नदी चिर संगिनी!
ओ नदी मेरी प्रिया, ओ नदी मेरी द्वितीया,
नदी मेरी यार, मेरी पुनः पुनः पुनर्जन्म!
यह परस्पर-पान ही है जन्म-धारण की
खेचरी-बज्रौलिका, पाँचवाँ पुरुषार्थ अथवा मुक्ति!
इसी से बार बार आना है ओ नदी,
ओ अनामा, ओ नदी, तेरे तट बार बार आना है!

साधारणीकरण

नदी, तू निमंत्रण बांट जाती है।
नदी, तू निमंत्रण की पाती है!
मेरे मन में जटिल-वरारोह देशकाल व्यापी,
महा महीरुह सहस्र वर्ष वृद्ध,
नदी, तू उसी की निमंत्रण-पाती है।
उसी के किसी चिरंजीवि-श्रीमान पौत्र-प्रपौत्र की
ज़न्म-द्वादशी अथवा विवाह-व्रतवन्ध की
हल्दी-अभिषिक्त एक स्वति श्री निमंत्रण पाती है
जिसे कल कल ध्वनि से तू सर्वत्र बाँट आती है,
अपने को बूंद-बूंद काट-काट सर्वत्र बाँट आती है!
नदी, स्वयं तू निमंत्रण की पाती है।
मिलते हैं बन्धु से बन्धु गले

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाता उल्लास रव दूर के गाँव तक
हँसी की वर्षा, मुस्कान पहचान की
काका और द्रादा, भइया और बचवा
उमड़ी है जवार; सभी भाई हैं
सभी परस्पर दृढ़ दाहिनी बाँह हैं।
('भइयारे बिराना, तब भी दहिन बाँह!')
षट रस स्वाद की बहार, दही-शक्कर।
कुल्हड़ पर कुल्हड़, पात्र पर पात्र
'वाह भाई वाह', 'दो, इन्हें और दो',
'लो भाई, लो', 'वाह भाई वाह!'
जुड़ता है प्रीतिभोज गाँव में
वीरोचित रोमांचक पंक्तिभोज
पाँत हँकड़ती है, खाती है, तृप्त डकारती है,
षट रस की होती है वर्षा, बजती है
अह, सुख और तृप्ति की बाँसुरी।
वह जो मेरे संस्कारों में हजार वर्ष व्यापी
महामहीरुह है वही इस समूचे ग्राम के
हजार हजार वर्षों के स्थावर संस्कारों का
'उर्ध्वमूलं अधोशाखा' विग्रह है,
उस वृद्ध महीरुह में नये मुकुल लगते हैं
वृद्ध तरु-जटाजूट लहलहा उठता है
आनन्द इसके पत्ते हैं, तृप्ति है फूल
और प्राण हैं लाल लाल गोदे,
मधुर और रसाल।
(दो सुपर्ण इसकी डाल पर बैठे हैं!
एक है दर्शक उपवासी और अन्य सरसफल का भोक्ता है।)
नदी तू स्वयं ही
मेरी उदार धरा, वत्सला भूमि की
मेरे मन मैं अतिष्ठ महावृद्ध
उर्ध्वमूल-अधोशाखा पीपल की
हल्दी-अभिषिक्त निमंत्रण-पाती है!
ओ नदी, तू इस बार जाकर जन जन से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वे जन-जन जो मेरे ही अस्तित्व के
विभिन्न टुकड़े हैं, जयमल-शुकदेव से
जितेन्द्र से, मंगला से, रामसागर से
शोभा से, एब्राहम और अजीज से—
सबसे जन-जन से जाकर कहना तुम :
'स्वति श्री सर्व उपमा योग्य बड़े को
प्रणाम और छोटों को हार्दिक आशीष'
ओ जन्मान्तर-सहगामिनी चेतन अस्तित्व की,
अस्मिता की, त्रिकाल व्यापी व्यक्तिचित्त की,
साथ ही मेरे, अपने, निजी लोकचित्त की नदी!
ओ, नदी, ओ जन्मान्तर-प्रवाह,
तू स्वयं में एक निमंत्रण की पाती है
अविच्छिन्न प्रीतिभोज की निमंत्रण पाती है।

उपसंहार

दूर कहीं दूर, कहीं पर
किसी एक दिन जुड़ता है पर्व संक्रान्ति का
जुटती है भारी भीड़— झारी-कमण्डलु,
दूब और अक्षत, दीप और पार्थिव
तट पर बिखरे हैं या प्रवाह को अर्पित हैं।
'ओ री मुन्नी, गहरे में मत जा'
'ओ टंकू, जल में दंगा नहीं करते हैं।'
'वाह री भाभी, पीती हो डूब डूब,
कहाँ ऐसा सीखा धार में सन्तार काटना?'
(भाभी की देह गोरी मछली है यार!
भाभी नदी कन्या है, गुदाज और स्वादिष्ट!)
'सब्र करो न, बैशाख तो आता ही है!'
(ओह, हल्दी और लग्न का माधवमास!)
'भाभी तेरा मुंह है अनूपम वाटिका
फूल जो झड़ते हैं मौसम-बेमौसम'
(मन कहता है : देह है अनूपम वाटिका!)
इधर इस प्रकार सस्वाद चलते हैं, उधर उस ओर
भीगे वस्त्र, कम्पित गात सूर्योन्मुख कोई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अंजलि समर्पित कर रही, नयन मूंद;
विगलित करुणा चेहरे पर झलक गयी;
फिर कुछ पुष्प दल गिरे नदी की धार में।
मैं देखता हूँ उस पार से प्रवाहिता
आ रहीं फूलों की पाँत पर पाँत
सार्थक है श्रम जल सरयूदास का
धन्य हैं उनका फूल वन, उनकी कुटी
और धन्य है यह गंगातट, गायों के ढारे
अरहर के झाड़, वन तुलसी के झोंप
खट्टी झड़बेरी के जंगल भी धन्य हैं,
शूकर, चित्रमृग, साँप और शृगाल
दौड़ते हिरन और कूजते चक्रवाक
ढेकीं की पाँत और सारस की वलाका।
धन्य है बाबा सरयूदास का परिवार।
दिन में, बाबा सरयूदास मधुकरी
माँग खाते हैं और फूल उगाते हैं
रात को श्वापदों के बीच किसी अन्तर की
अनामा नदी को 'योगवाशिष्ट' के
श्लोक बोल बोल कर सुलाते हैं
देते हैं श्लोकों की थपकी, कहते हैं;
'नदी, अब तू बस कर, अब तू मत रो,
ओ मेरी रानी, ओ मेरी फल्गु, सो जा!'
'नदी, अब तू सो जा!'
तो भाई मेरे, जान ले तू भी असल बात
एक ही वह नदी है जो बहती सर्वत्र
मुन्नी में, टंकू में, भाभी में, दादी में
मुझमें और तुझमें वही है जो
बाबा सरयूदास में फल्गु बन जाती है,
हाँ, हाँ, वही एक ही सर्वव्यापी अतः सलिला है
अरे वही है बुद्ध की निर्मल निरञ्जना भी।
वही बाहर और भीतर, सर्वत्र, सबको
परस्पर जोड़ती है, परस्पर बाँटती है,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वही भगवती सुरेश्वरी भागीरथी बनती है
और तट पर संक्रान्ति पर्व जुड़ता है।'
पर जन जन के भीतर भिन्न नाम, भिन्न रूप,
निर्मल निरञ्जना या मरुस्रोता फल्गु
अनामिका यमुना या लुप्तस्रोत सरस्वती
या और कुछ बनती है, पर नदी है
एक, अखण्ड, व्यक्ति के सामूहिक चित्त की।
पात्र-पात्र में सिमट कर भिन्न भिन्न
नाम रूप लेती है, जन्म प्रति जन्म
हमारी व्यक्ति-सत्ता की अस्मिता की
वाहिका बनी हुई आमरण साथ चलती है
अतीत और अनागत के जन्मों का
गर्भ बीज धारण किए हुए यह नदी
जन्म प्रति जन्म नखशिख बहती है
इसी से कहता हूँ, नदी, तुम मेरी द्वितीय स्वयं।
नदी, तुम वान्धवी, प्रेमिका, माता
नदी, तुम देवता,
तुम्हें बार-बार नमन
तुम्हें बहुत-बहुत प्यार!

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१. पाहन मन नीलकंठ

दुपहर में कण्ठ खोल बोले नीलकंठ
प्रखर ज्वाल धूप थी, भूख थी
रक्त चक्षु दीठ थी, प्यास थी
नग्न बाहु पीपल था, मौत थी
नाचती दुपहरी में, पी-पी कर मृगवारि
शस्यपीत धरती का गीत लिखे निलकंठ
सांझ बड़ी सुन्दर क्षमामयी
धीर पग, शान्त, दयामयी
आयी ज्यों मां ममतामयी
परमारे अभिमान के गोधूली लग्न में
डैनों में मुँह छिपा रोये नीलकंठ
मानी-अभिमानी नीलकंठ!

घिरती है गरल-स्नात रात
प्रेतों-चुड़ैलों के काम-संघात
वट-पीपल तक के झूमते गात
माया कुहुक से रातभर जूझे फिर
मन के पहरुए ये नीलकंठ
पाहन-मन नीलकंठ।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२. सृष्टि कामरूपा : चर्यापद

(१)

बजती है दूर कहीं मादल
आती है फूल लदी नाव
अकेले न जाना नदीतट बन्धु
राह भी मांगेगी दाव
गोता लगाना छूना न नीर
बहती नदी, तट खनना न कूप
दिन में चरना माणिक औ मोती
रातों में जग्ना तुम कामरू।

(२)

कच्छप की पीठ में दूहो दूध
शाखा पर तेंतुल जल में कुम्भीर
यह सब दिन की चर्चा है बन्धु
रातों में फूल झरे कामरू–तीर
बजती है वंशी चलती है नाव
कि उठती है हाँक कि 'आया रे बान'
फेंको गिराव खीचो ले रस्सी
आया रे यौवन आया रे बान

(३)

होता मैं योगी मछिन्दरनाथ
बुनता हवा का निर्गुण जाल
लखकर नदिया हुई अकूल
पीता पवन और भखता काल
इंगला–पिंगला करती गान
ललना[१] का मुख करता ध्यान
छक कर पीता इच्छा वारि
अकुल महासुख नखशिख पाना।।

१. बौद्धों की तांत्रिक साधना में सुषुम्न को ललना कहते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३. माया की पालकी : चर्यापद

चलता है रातभर माया का रथ
बेला कनेर के पुष्पभार से लदी
चींनाकुश ओहार सजी लाल लाल पालकी
अमावस की रात है, भय है, भीति है
उनींदी वस्त्रहीन कन्यायें हैं, रक्तचक्षु ब्राह्मण हैं
झाड़-फानूस है, रंग है, जुलूस है
चमचमाते बलि के खड्ग हैं
ओ प्रिया बान्धवी, देहरी से ही नमन करो
फिर करो कस कर दरवाजे बन्द
ओ जोगीरे बन्द करो दशमुख द्वार
ओ मेरी यार कान लगा कर ध्वनि सुनो,
"हाँ कँहारी, हुइहप्पा, हुइहप्पा
हासे हुसे, हासे हुसे
हुइहप्पा, हुइहप्पा,
शब्द प्रेत आते हैं द्वार पर
देते हैं दस्तक, माया का रथ है
कामना करायल थी, लपट है
तीखी गंध है
पीछे है माया की पालकी "हुइहप्पा।"
उनींदी कन्यायें हैं
रक्तचक्षु ब्राह्मण हैं
रातभर
रातभर
पश्चिम से पूरब की राह पर रातभर
चलती है माया की पालकी
न शंख, न तूर्य, न बाँसुरी
स्तब्ध, मूक मुदित चक्षु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लथ-पथ उद्भ्रान्त नारी-नर
माया की यात्रा यह रातभर!
उनींदी वस्त्रहीन कन्यायें हैं, रक्तचक्षु ब्राह्मण हैं
माया की पालकी।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४. ग्रीष्म में महाकाव्य

पवन-वधू ग्रीष्मा इन ताल पत्रों पर
विजयी घुड़सवारों का स्तवगान लिख गयी।
पत्ते खरभर कर उठे, बोलने लगे मुक्तकण्ठ
हरहराते रथ जैसे हाहाकारमय स्तोत्र और गान
शाखों पर बैठे गृद्धगण पुलकित पंख फुला बैठ गये
गोया युद्धक विमानों की महफिल ही बैठ गयी हो!
किसी वियतनाम के शीश पर।

योद्धाओं का कीर्ति-छप्पय गाता रहा
हरहराते रथ जैसे कीर्ति के कवित्त-छन्द
आदिम अरण्य ताल-पत्रों पर व्यक्त होते रहे
ग्रीष्मा पवन वधू किसी महाकवि के हृदय जैसा
पर्व--प्रतिपर्व भुजा उठा हाहाकार करती रही।
और सबने कहा,
आज सांझ पछुआ बड़ी झकझोर कर बही।
सुनता रहा एक नाम! तुम्हारा ही नाम बार बार!

बाहर सारी प्रकृति करती रही
अनाम जयगान, हाहाकार
पर मुझे लगा कि यह अकाल बेला है
समय है प्रतिकूल, अतः मौन कण्ठ
मैंने तुम्हें स्मरण किया बारबार!
लिखा तुम्हारा ही नाम
बार-बार!

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

५. प्यार करें

आओ परस्पर सहज बनें।
तुमने ही तो कहा था : होने दो रात
मैं हो जाऊँगी सहज और आत्मस्थ
दिवस का यह तप्त-चक्षु सहजता का विरोधी है
अत: कवच पहने रहना। दृढ़ धातु बने रहना ही है ठीक
अत: होने दो रात
मैं हो जाऊँगी सहज, हो जाऊँगी प्रकृत
और स्वस्थ्य।

और अब,
आ गयी यह रात
उलूकमुखी, शृगालमुखी, अप्राकृत रात!
नीबी विघटित अप्राकृत रात!
तो भी आओ कम से कम हम और तुम तो
परस्पर सहज बनें!
पेड़ों की छतनार शाखाओं पर बोलते हैं उलूक
हमारा ही नाम ले रहते हैं
काल का अशुभ काव्य पढ़ते-पढ़ते
आजीवन असगुन बाँचते-बाँचते
मैं हो गया हूँ अब पत्थर और निर्विकार
तुम आओ
हम परस्पर सहज बनें!

चमगादड़ों की पांतें झपटती रहें
गादुड़ों के भोज और मलत्याग चालू रहें
सुन रहा हूँ मरनी महीरुहों के अरण्य-रुदन
साथ ही पितरों के परस्पर अश्रुपात!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तो भी कोई बात नहीं,
विकल है प्रकृति आज
विकल है इतिहास
सब कुछ मरता है, मर्त्यों के लोक में
पर प्यार नहीं मरता है जन्म-जन्मान्तर
हृदय की एक बूँद जन्म प्रतिजन्म के उद्धार कर देती है
अतः इस नीबी-विघटित, महा अशुभ बेला में भी
आओ परस्पर सहज बनें,
प्यार करें।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६. सुखावती : उर्वशी

तुम्हारे महासुख का महार्थ उपसंहार
उर्वशी!
तुम्हारी रात का यह सरल सीधा भोर!
इसे शतबार नमन!

रात अंग-प्रतिअंग तरल वारिधार चपल
रात दूध सी स्वादिष्ट
रात, सांवरी कोमल गात-श्याम कुंतलकेश!
मैं डूब-डूब साधता रहा योग
खोजता रहा अंग-प्रति अंग अनुपम अनुप्रास
उपमाएँ उत्प्रेक्षायें आदिम अघोर लीलाओं की
खेलता रहा रात के अभ्रक पाश में गांठ प्रति गांठ
उद्घाटित करता रहा सम्पुट-प्रहर-मणिदीप,
शंख और मीनमुख, काई शैवाल और प्रवाल
मैं मथता रहा अंधकार ढूँढ़ता समुद्र-फल
पीता रहा देह-तमसा का फेन
रात-भर-रातभर
प्रमत्त और ऊभ-चूभ

उर्वशी, काम-शरहा उर्वशी,
मैं रातभर सुनता रहा, तुम्हारे रशना दाम
काम-कूजन में

अपनी ही जन्मान्तर अनुभूतियों की बिक्षिप्त
स्रगधरा, विकल विक्रीड़ित शार्दूल एवं
अनुष्टुप छन्द-बन्धों को, रातभर-रातभर!
पीता रहा देह-तमसा का फेन
प्रमत्त और ऊभ-चूभ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बीती वह विह्वल रात, हुआ प्रात
सहज सुन्दर सीधा सरल प्रात!
चक्षुयें, मस्तक में, बाहर काक-कोकिल में
उतरा भोर
चहुँ ओर
उर्वशी, तुम्हारी ही रात का यह प्रसव सुन्दर
देवोपम सरल यह भोर
लक्ष-लक्ष सूर्य कन्याओं से स्तुतिगान
मंत्र-गम्भीर
कलराटेयुक्त भोर!
मुझे कर गया हलका विरंज-विशुद्ध यह भोर
मैं रातभर पीता रहा 'शॉंक' पर 'शॉंक'
सहस्त्र-सहस्त्र प्रजापति कन्याओं की
जंघाओं-नाभियों-मणिकूटों की
विद्युत् तरंगों के आवाहन-मय 'शॉंक'!
मैं तथागत तीर्थंकर (या कपिमुख विदूषक़)
एवं तुम्हारी प्रमत्त-विमत्त रात में जब
जब हम दोनों परस्पर पीते रहे
तमसा का दूध और तमसा की वारुणी
पीते रहे परस्पर करते रहे रिक्त
और तभी आयी यह भोर
और मुझे सहज खाली पात्र मानकर
बरसाती गयी किरण, पूर्ण करती गयी मुझे
और मैं हुआ लबालब ज्योतिपात्र
एक सहज मानुष दीप
एक आत्मदीप
उर्वशी तुम्हारी यह रात
आशीर्वाद दे गयी।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७. मैं एक शंखमीन

(१)

अभी तो मैं चुपचाप सुनूँगा और घृणा करूँगा!
समुद्र के हृदय में गरल है, ज्वाल है,
मोती, सीप, प्रवाल और सागर पुष्प
हाँगर, कवचमीन, झख–मकर–नक्र
और न जाने क्या–क्या अशेष अनन्त जीवन है
रूप–रतन राशि है।
इन सबसे समृद्ध सागर राजा है। क्षुब्ध होने में समर्थ है
सहस्र–सहस्र मुट्ठियाँ तान कर रहा वह लगातार क्रुद्ध–गर्जन
दे रहा धिक्कार आवर्जना और व्यभिचार को।
पर मैं उसी महान् की एक क्षुद्र संतान
मैं एक शक्तिहीन शंख–मीन
स्मृति और परमास्मृति के सारे क्रोध,
सारे आह्वान को
अपने में निरन्तर भरता हुआ भी
निरन्तर निज को भावसमृद्ध करता हुआ भी
सिर्फ चुप हूँ और घृणा कर रहा हूँ
क्योंकि मैं हूँ एक क्षुद्र, स्पर्श कातर, कामार्त्त
वाणीहीन स्वार्थलिप्त शंखमीन
भय और काम के जल में डूबा हुआ क्षुद्र
मात्र एक शंखमीन।

(२)

पर एक दिन वह आयेगा
जब मैं चर्म और रक्त से काम और भय से
मुक्त हो देहवल्कल त्यागकर
शुद्धत: कंकालमात्र रह जाऊँगा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तब मेरे हिया-पांजर को मिलेगा
अनागत की साँस और होंठों का सान्निध्य
और तब मैं महापिता समुद्र के उस आवाहन को
जिसे मैं पीढ़ी-दरपीढ़ी आत्मसात करता रहा
दूँगा एक दृढ़कण्ठ अभिव्यक्ति, उदात्त और दृढ़कण्ठकि
वंचना के दुर्ग भहराकर गिर जायेंगे
इतिहास की प्रतिशोध कामी नेदत्र उठ खड़ी होगी
और होगा नये पैगम्बर का अवतरण।
इस रौद्रधूप तप्त सिकता पर सोये हुए
मैं नहीं, मेरी अस्थि, मेरा हिया-पांजर, मेरा गद्य
प्रतीक्षा करेगा, सतत धीर प्रतीक्षा करेगा
अनागत के दृढ़मन, कम्बुकण्ठ पुरुषों की।
अत: अभी तो मैं चुपचाप सुनूँगा
और घृणा करूँगा
घृणा है कीच गली गोबर वीभत्स
तो भी अग्निबीज शब्दों की हराई में
यही परिवेशन करेगी रस और प्राण
कटु स्मृतियाँ बन जायेंगी रस और तेज
और इसी आवाहनमयी घृणा से
इतिहास पुरुष का लगा श्रम
सार्थक होगा, और जीवन होगा
उर्वर ताजा कचनार शस्यश्यामा
और तब तुम और हम और वे सब
मिलकर करेंगे दखल
पूरा हिन्दुस्तान दखल कर लेंगे
सजायेंगे क्यारियाँ खेत और उपवन
वेणुवन आम्रवन मधूक-वन
आभीर कण्ठतान और संथाल बांसुरी
मणिपुरी मुद्रायें संकीर्त्तन के पद
और महाकाव्य और न जाने क्या क्या
बहुत-बहुत अजान अमित, अपार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी से मैं अभी चुपचाप सुनूँगा और
प्रजापति रूपी घृणा का संचय करूँगा।

(३)

ओ माणिक लोभी हंस!
ओ माणिकभक्षी अभिजात हंस, सुनो–सुनो
मैं भी एक नग, एक रतन, एक समुद्र संतान
मैं भी रत्नाकर वंशीय चन्द्रसहोदर एक रत्न।
पर ओ माणिकभक्षी हंस
स्मरण रखना कि सिन्धु में वाड़व है, गरल है
मैं भी उसी हलाहल का सहोदर हूँ
यद्यपि क्षुद्र कवच–मीन शंखमीन।
तुम मेरे आवाहनमय मृत अस्थिपंजर को पचा नहीं पाओगे
अतः व्यर्थ आहत न कर लेना चंचु
ओ मृणाल भक्षी कोमल गात हंस
मुझ गरल–सहोदर समुद्र की कुलीन संतान को
मुझ अल्प मूल्य रत्न को,
जरा पहचाने रहो।

●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'नाम'

कल रातभर हवायें आती रहीं
रचती रहीं एक वातावरण
एक सुगन्धित नाम।
देती रहीं सांस लेती हुई पहाड़ी घासों की
एक वासंती मँह-मँह संवाद
मनमें बार बार दुहरायी गयी
एक पुरानी तृषा, एक पुरानी प्रार्थना
कुछ अपरिचित संज्ञायें
कुछ दुलराये सहलाये नाम।

वैसे रात थी कालिमामयी घनघोर
सूचीभेद्य अंधकार
नदी थी भयग्रस्त
स्तब्धतट एकान्त
पीत चक्षु सरीसृप बांबियों से निकल
मुँह फाड़ विचरण करते हैं
और रुदन करते हैं उलूक
पुकारते नाम।

तभी इस महाभय के अतल से
हमारी तुम्हारी पहचान अचानक
ऊपर उतरा गयी
स्मरण आयी तुम्हारी एक
फुल्लकुसुमित कथिका
और स्मृतियों के उलझे कान्तर में
फूटा फूल सा सुगन्धित तुम्हारा नाम।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि,
उदास, स्तब्ध, भयग्रस्त रात
बन जाती है एक सुगन्धित
कोमलकान्त शब्दों का बन–उपवन।
पराजित हो जाती है अंध अमोध नियति
और सारे सरीसृप लज्जित हो
लौट जाते हैं बांबियों में,

कि,
वह भयग्रस्त कालीरात
बन जाती है एक उज्ज्वल उद्धार
एक प्रसन्न उत्फुल्ल चन्द्रोदय।
एक लीला, एक प्रार्थना, एक पुष्पांजली
एक साश्रुकण विरह और मुक्ति
एक वृन्दावन धाम;

कितना शक्तिधर है
तुम्हारी कबकी एक भूल गयी कथिका
तुम्हारा वह चपल चटुल
नन्हा सा नाम।।

(*1987 की डायरी से*)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.